सती मैया का चौरा

भाग 6

भैरव प्रसाद गुप्त

सती मैया का चौरा

भाग 6

मन्ने गोरखपुर के लिए चल पड़ा। रास्ते-भर वह एक शेर के एक ही मिसरे को बार-बार गुनगुनाता रहा:

फिर मुझे ले चला वहीं जौक़े-नज़र को क्या करूँ...

अबकी उसने यह निश्चय कर लिया था कि महशर को ज़रूर-ज़रूर अपनी हालत से वाक़िफ़ करा देगा और उसे फ़िलहाल सब्र से काम ले अपनी ख़ाहिशों को दबाकर रखने की सलाह देगा। उसे विश्वास था कि अगर सब-कुछ समझाकर वह उसे कहेगा, तो वह ज़रूर मान जायगी और आगे उसकी फ़रमाइशों और शौकों को लेकर उसे परेशान न होना पड़ेगा।

लेकिन उस ग़रीब घर में उसका ऐसा शानदार स्वागत-सत्कार हुआ, महशर और उसकी बहनों और उसकी गोइयों ने उसके चारों ओर ऐसे रंगीन और रूमानी वातावरण का निर्माण किया और उसके दूसरे रिश्तेदारों ने इस क़दर उसे पुरतकल्लुफ़ और ठाटदार दावतों से दबा दिया कि मन्ने की ज़बान से, हमेशा सजग रहने के बावजूद, यह बात न निकल सकी। वह अपनी बात उससे कहकर उसकी ख़ुशियों में ख़लल डालने की हिम्मत ही न कर सका। दरअसल जो नक्शा इस समय उसके सामने उपस्थित हुआ, उसकी वह कल्पना ही नहीं कर सका था। उसने तो सोचा था कि जैसे वह अपने बहनोइयों का स्वागत-सत्कार करता है, दो-तीन दिन तक अच्छी तरह मेहमानदारी करता है और फिर उनसे लापरवाह होकर उनके साथ घर के आदमी की तरह व्यवहार करने लगता है, वैसा ही यहाँ भी होगा और उसे महशर से कुछ गम्भीर और आवश्यक बातें करने का अवसर मिलेगा। लेकिन यहाँ तो उनके ग़रीब होने के बावजूद, जैसे उनकी मेहमानदारी का कहीं अन्त ही नहीं दिखाई पड़ रहा था, जैसे कौन-कौन जाने क्या-क्या उसे खिलाने, कैसे-कैसे उसे खुश रखने, उसका मनोरंजन करने और क्या नहीं उस पर न्योछावर करने को तैयार था, जैसे सब उसे हथेलियों पर लिये हुए थे, उसका मुँह तकते रहते थे, और बेबात की बात पर भी बार-बार माफ़ी माँगते थे कि वे उसके लायक़ कुछ कर नहीं पाते!

और महशर का तो पूछना ही क्या था। वह तो चाँद और सितारों की दुनियाँ में तितली की तरह उड़ती रहती थी। उसके होठों से हमेशा गुलाब की पँखुरी की तरह हँसी झरती रहती थी। उसकी बड़ी-बड़ी आँखें ख़ुशियों की चमक से ऐसी भरी-भरी रहती थीं कि देखकर अन्देशा होता कि इनकी पलकें कैसे बन्द होंगी? उसके सुर्ख-सुर्ख गालों से जैसे उल्लास की किरणें फूटती रहती थीं। उसकी हर्ष-विह्वलता देखने की ही चीज़ थी, जैसे वह खुशियों के नशे में धुत हो और उसे मन्ने के सिवा और किसी बात का होश ही न

हो! ...और उसकी नन्हीं-नन्हीं सालियों और कमसिन और जवान गोइयों की छेड़-छाड़, चुहल और मज़ाक और रंग-बिरंगे दुपट्टों के रंगीन सायों में ख़ुशियों की चमक लिये हुए उनके मुस्कराते, हँसते, खिलखिलाते, शरमाते और लजाते हसीन चेहरे...मन्ने को लगता कि वह एक परिस्तान का अकेला शहज़ादा है...

मन्ने को रह-रहकर अफ़सोस होता कि वह इस रंगीन नज्ज़ारे का मात्र एक दर्शक ही क्यों है? काश, वह भी ख़ुशियों की इस दुनियाँ में आकर उन्हीं की तरह बावला हो जाता, उन्हीं की तरह दीन-दुनियाँ को भूलकर, अपने को भूलकर, इस ख़ुशियों की सतरंगी धारा में अपने को बहा देता!

लेकिन उसकी तरह के अपनी स्थिति के प्रति सदा सजग, भविष्य के प्रति क्षण चिन्तित रहनेवाले,अपने कत्र्तव्यों और उत्तरदायित्वों को हमेशा सामने रखनेवाले और हर स्थिति में अपने को सदा वश में रखने का प्रयत्न करनेवाले युवक के लिए यह सम्भव न था। वह इस धारा में नहीं बह सकता था। फिर भी जो सम्भव था, उसने किया,उसने किसी को यह अनुभव न होने दिया कि वह इस-सबका केवल दर्शक है, उसने किसी को यह एहसास न होने दिया कि इस फूल से लदे बाग़ में भी एक काँटा उसके दिल में चुभकर सब गुड़ गोबर किये दे रहा है...और उसने महशर से अपने मन की एक बात भी नहीं कही। उस समय उसकी ख़ुशी को छेडऩा उसे वैसे ही लगा, जैसे कोई गुलाब के फूल पर बैठी तितली के परों को दीयासलाई की जलती तीली दिखा दे!

अपने अब्बा और अम्मा की उसे अक्सर याद आती थी, लेकिन इस मौक़े पर जो उनकी याद आयी, वैसी शायद ज़िन्दगी में फिर कभी नहीं आयी। काश, वे ज़िन्दा होते, उसके सिर पर होते और उसे अपनी स्थिति का कोई ज्ञान न होता, इतने कत्र्तव्यों का भार उसके सिर पर न होता और अपने भविष्य की उसे चिन्ता न होती...वह भी महशर की तरह अल्हड़, आज़ाद और बेफ़िक्र होता, तो...तो...

...आह! यह पूनो का चाँद उगकर उसके सिर पर होकर गुज़र जायगा और वह आँख उठाकर उसे एक नज़र देख भी नहीं पाएगा! ...आह! यह ख़ुशी उसे छेडक़र भागी जा रही है कि वह दौडक़र उसे पकड़े और पकडक़र उसे अपने में समा ले, लेकिन वह अपनी जगह पर ठिठक खड़ा है और उसे ग़मगीन आँखों से देख रहा है और वह रुक-रुककर फिर-फिर अपनी शोख़ निगाहों से देख-देखकर उसे बार-बार उकसाती हुई भागी जा रही है, जो उसके देखते-देखते ही अन्तरिक्ष में समो जायगी और फिर कभी वापस नहीं आएगी...यह ख़ुशी जो ज़िन्दगी में सिर्फ़ एक बार आती है...जवानी का यह क्षण, जिसे आदमी ताज़िन्दगी याद करता है! ...आह! मन्ने क्या याद करेगा? ...वह

शादी...वह सुहागरात...और यह उस क्षण का यह अन्तिम कण...कुछ नहीं...कुछ नहीं...मन्ने को वह शादी याद रहेगी, वह सुहाग रात याद रहेगी...सब याद रहेगा, ख़ूब याद रहेगा :

हम भी क्या याद करेंगे कि ख़ुदा रखते थे! ...

जो होना था वही हुआ। मन्ने इस बात में माहिर था कि परचा करके आता और बता देता कि उसे इतने नम्बर मिलेंगे और देखा जाता कि दो-चार नम्बर इधर-उधर उसका अन्दाज़ा ठीक ही निकलता लेकिन इस बार उसने ख़ुद भी नम्बरों का अन्दाज़ा नहीं लगाया था। ...उसे जो डर था, वही सामने आया, द्‌वितीय श्रेणी! उसके अफ़सोस का ठिकाना न था। उसका कैरियर खराब हो गया था। ...इस शादी ने ही उसे चौपट करके रख दिया। ...कभी वह सोचता कि जो होना था, वह तो होकर रहा, उसकी चिन्ता और परेशानी से उसमें कोई रत्ती-भर का भी फ़र्क़ नहीं पड़ा, फिर इस चक्कर में पडक़र उसने अपना कैरियर क्यों ख़राब किया? क्यों नहीं निश्चिन्त होकर उसने परीक्षा की तैयारी की?

लेकिन दूसरे ही क्षण वह स्वयं इस तर्क पर हैरान होकर झुँझला उठता कि भाग्यवादियों की तरह वह तर्क कर रहा है! हर बात को इन्सान भविष्य के हवाले कर निश्चिन्त कैसे हो सकता है? वह परिस्थिति से अपने को अछूता कैसे रख सकता है? वह कोई माटी का लोंदा तो नहीं कि परिस्थितियाँ उस पर से होकर गुज़र जायँ और वह एक मुद्रा में निश्चल पड़ा रहे? और फिर क्या माटी के लोंदे पर भी सर्दी-गर्मी, हवा-पानी का प्रभाव नहीं पड़ता? इन्सान किसी विषम परिस्थिति में पडक़र उससे प्रभावित न हो, उस पर सोचे नहीं, उससे निकलने के लिए चिन्तित न हो, उससे संघर्ष न करे, क्या ऐसा भी हो सकता है? यह दूसरी बात है कि सब-कुछ करने पर भी वह उस विषम परिस्थिति से अपने को निकाल न पाये। पर क्या इसीलिए उसे इस बात का अफ़सोस होना चाहिए कि उसकी कोशिशों के बावजूद भी जब परिस्थिति ज्यों-की-त्यों बनी रही, तो क्यों उसने ख़ामख़ाह के लिए उससे निकलने के लिए सिर खपाया, ख़ून सुखाया और परेशानियाँ झेलीं? नहीं, यह तो लड़ाई लड़ने के पहले ही हार मान लेने की तरह है और यह बात मन्ने के स्वभाव के विरुद्‌ध है। मन्ने लड़ने के पहले ही हथियार नहीं डाल सकता!

मन्ने के जीवन में यह कोई पहली समस्या या पहली परिस्थिति नहीं खड़ी हुई थी। एक तरह से कहा जाय, तो उसके सिर मुड़ाते ही ओले पड़े थे? लेकिन किस तरह वह अपना सिर आज तक बचाये हुए है, यह उसके जाननेवाले सब लोगों के सोचने की

बात है। मन्ने को स्वयं इस बात का एहसास है, गर्व और आत्मविश्वास है कि ज़िन्दगी के मैदान का वह कोई बुरा सिपाही नहीं, उसमें और कुछ हो या न हो, लेकिन साहस से लड़ने का माद्दा अवश्य है, परिस्थिति को समझने और उसके अनुरूप काम करने की समझ की भी कमी नहीं। उसमें विद्रोही भावना और दबंगई भी कूट-कूटकर भरी है। बनैले सूअर की तरह आँख मूँदकर वह सामने की बाधा में घुसा भी है, कबूतर की तरह आँख मूँदकर परिस्थिति को अपने सिर से गुज़र भी जाने दिया है, भैंसे की तरह सिर से सिर मिलाकर, पाँव जमाकर प्रतिद्वन्द्वी से लड़ा भी है...लेकिन आज जिस परिस्थिति में वह पड़ गया है, उसमें शायद अभी उसकी बुद्धि कुछ काम नहीं कर पा रही। शायद इस परिस्थिति की प्रकृति ही कुछ और है, जिसे वह समझ नहीं पा रहा, शायद यह मसला कुछ ज़्यादा नाजुक है, जिसे वह आसानी से या कड़ाई से हल नहीं कर पा रहा। या शायद ऐसा इसलिए हो कि अब तक जो-कुछ गुज़रा, अकेले उस पर से गुज़रा, अकेले उसी पर उसका प्रभाव पड़ा, अकेले वही उसके हेस्त-नेस्त का ज़िम्मेदार रहा और अकेले वही उसका फल भोगेनेवाला था। ...और अब उसके साथ एक और प्राणी भी बँध गयी है, जिससे इस समस्या का गहरा सम्बन्ध है और जो-कुछ वह इस विषय में करेगा, उसका असर उसी पर ज़्यादा पड़ेगा। और वह ऐसा कुछ करना नहीं चाहता...नहीं, चाहता तो ज़रूर है, लेकिन अभी तक कर नहीं पा रहा, जिससे उसे यथार्थ का परिचय हो जाय, वह समझ सके कि मन्ने की स्थिति क्या है और वह उससे क्या चाहता है। पहले ही उसने उसके साथ कम ज़्यादती नहीं की है...उस तरह शादी करना...उस तरह सुहागरात मनाना...उस तरह बिना कुछ लिये-दिये पहली बार ससुराल चले जाना...फिर भी उसका वह व्यवहार, उसकी वह ख़ुशी...वह कैसे उसकी ख़ुशी पर अचानक आग रख दे?

फिर? ...वह क्या करे, कैसे करे? ...यहाँ वह सच ही ग़च्चा खा गया। उसने तो सोचा था, शादी करना है, कर लो और अपने रास्ते पर आगे बढ़ जाओ। तीस दिन फ़ाक़े के बाद ईद मना लो और फिर छुट्टी! और यहाँ यह मालूम हो रहा है कि यह ईद वह ईद नहीं; यह तो वह ईद है, जिसे मनाने के बाद फ़ाक़े शुरू होते हैं। और वह भी तीस दिन के नहीं, जाने...

आश्चर्य है कि परीक्षा-फल का दुख मनाता-मनाता भी मन्ने फिर-फिर इसी समस्या पर आ जाता, इसी की उधेड़-बुन में लग जाता, इसी की परेशानी में उलझ जाता। ऐसा कदाचित् इस कारण था कि मन्ने का यह स्वभाव ही था। जो हो जाता, उसकी उधेड़-बुन में लगना उसके स्वभाव के विरुद्ध था। जो हो गया, सो हो गया, उसे अदला-बदला तो जा नहीं सकता, फिर ख़ामख़ाह के लिए उसे लेकर परेशान क्यों हुआ

जाय? यही कारण था कि मन्ने के दिल में एक बार भी यह बात नहीं उठी कि आख़िर उसने शादी ही क्यों की? नहीं, जो शादी हो गयी, उसके बारे में क्या सोचना? लेकिन उससे जिस परिस्थिति ने जन्म लिया है, उस पर तो उसे सोचना ही पड़ेगा, उसमें से होकर उसे निकलना ही पड़ेगा, वर्ना कौन जाने आगे की परीक्षाएँ भी...आगे, आगे! मन्ने ने सिर्फ़ आगे देखना सीखा था!

ऐसा नहीं कि मन्ने अपने अतीत के विषय में कभी सोचता ही न हो। नहीं, कभी-कभी, छठे-छमासे, किन्हीं विशेष मन:-स्थितियों में वह अवश्य अपने जीवन का सिंहावलोकन करता, लेकिन प्रायश्चित्त या पश्चात्ताप के लिए कम और लेखा-जोखा और विश्लेषण के लिए अधिक और ऐसा करने के बाद उसे लगता कि वह एक दौरे की स्थिति से गुज़रा है, लेकिन इस दौरे के बाद, साधारण दौरों की तरह, उसकी शक्ति का ह्रास न होता, बल्कि वह अधिक शक्ति-सम्पन्न हो उठता, उसका आत्मविश्वास और दृढ़ हो जाता और उसमें संघर्ष की भावना और तीव्र हो उठती।

लेकिन यह शादी! और इससे पैदा हुई परिस्थिति और उसमें उसका आचरण! ...सोचते-सोचते मन्ने को कभी-कभी लगता कि शायद यहाँ उसने ज़रूर कुछ अपने स्वभाव के विरुद्ध किया है और अपने स्वभाव के विरुद्ध ही इससे आँख मिलाने से कतरा रहा है। क्या इसका कारण केवल यही है कि उसे इस लडक़ी का ख़याल है? नहीं, उसका मन इस स्थिति का शत-प्रति-शत श्रेय केवल इस कारण को देने को तैयार नहीं होता और जैसे मन्ने को एक आभास-सा होता कि इसका कारण और भी कुछ है। ...वह क्या है? क्या प्रेम?

नहीं, प्रेम होता, तो मन्ने इस तरह लड़कियों की तरह शर्माकर अपने सामने ही इस शब्द का उच्चारण नहीं करता। सच पूछा जाय तो अब तक उसने नज़र-भर एक बार भी महशर को नहीं देखा था। फिर प्रेम का सवाल ही कहाँ उठता है? जीवन में प्रेम का अनुभव उसे केवल मुन्नी को लेकर हुआ है। दोस्ती की जाने कितनी मंज़िलों को पार कर उसका सम्बन्ध प्रेम तक पहुँचा था। एक दूसरे के बिना उनका एक क्षण भी रहना असम्भव लगता था। एक-दूसरे के ज़रा-से दुख पर भी वे कैसे तड़प उठते थे! एक-दूसरे के लिए सर्वस्व त्याग के लिए वे सदा तत्पर रहते थे। इसके लिए उन्हें कितनी तकलीफें झेलनी पड़ीं, कितनी बदनामी उठानी पड़ी, लेकिन मन्ने को कभी शर्मिन्दगी हुई हो, इसकी उसे याद नहीं।

मन्ने के अब्बा के मरने के एक साल बाद की बात है। गर्मियों की छुट्टी थी। दोपहर को दोनों अकेले खण्ड में बैठे बातें कर रहे थे। उस समय उनके पास बातों का कितना

बड़ा ख़जाना था कि कभी ख़त्म होने का नाम ही न लेता था। बातों-ही-बातों में जाने कैसे प्राइमरी स्कूल के उस पण्डित की बात आ गयी। मन्ने चौंककर बोला-अरे, तुम्हें उनकी एक बात बताना तो मैं भूल ही गया!

-क्या?-मुन्नी ने पूछा।

-परसों दोपहर को मैं क़स्बे से बहन के लिए दवा लेकर आ रहा था, तो रास्ते में एक बाग़ में पण्डितजी से भेंट हो गयी। मैंने नमस्ते किया, तो आशीर्वाद देकर वे बोले, मैं तो आपके यहाँ से ही लौट रहा हूँ। ज़रा बैठकर आप सुस्ता भी लीजिए और मेरी बात भी सुन लीजिए। फिर लगे वे मेरी बड़ाई करने कि आपको देखकर मुझे बड़ा फ़ख्र होता है, आप ज़रूर एक दिन बहुत बड़े आदमी बनेंगे। उनकी बातों से घबराकर मैंने कहा, पण्डितजी, मैं बहन की दवा लेकर आ रहा हूँ, ज़रा जल्दी में हूँ। आप कहिए, मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ? इस पर पण्डितजी ने व्यस्त होकर अपना बस्ता खोला और जल्दी-जल्दी क़लम-दावात और एक स्टाम्पवाला काग़ज़ निकालकर बोले, ज़रा इस काग़ज़ पर यहाँ नीचे, इस कोने पर अपना नाम तो लिख दीजिए! वह काग़ज़ देखकर मेरा माथा ठनका। मैंने कहा, पण्डितजी, इस काग़ज़ पर मेरे दस्तखत की क्या जरूरत पड़ गयी? मेरी यह बात सुनकर उनकी तो जैसे बाई ही गुम हो गयी। लगे आँख बचाकर इधर-उधर ताकने। फिर हकलाकर बोले, मेरे पास इस वक़्त कोई दूसरा काग़ज़ ही नहीं है। आप मेरे अज़ीज़ शागिर्द रहे हैं, मैं चाहता था कि आपका दस्तख़त मेरे पास रहता। मुझसे हँसी नहीं रोकी गयी। बोला, पण्डितजी, दस्तखत तो बच्चे इकठ्ठा करते फिरते हैं। मैं आपको कभी अपना एक फोटो ही दूँगा। उसे आप पास रखेंगे, तो मुझे भी ख़ुशी होगी। उनके चेहरे पर हवाइयाँ उड़ रही थीं। तभी पगडण्डी से चार-पाँच आदमी आते हुए दिखाई दिये और उन्होंने चट काग़ज़ और क़लम-दावात बस्ते में रख लिये और उठते हुए बोले, अच्छा फिर कभी आपसे मुलाक़ात करूँगा। और सिर झुकाये हुए चल पड़े। मेरे जी में उस समय ऐसा हो रहा था कि उनकी पीठ पर जोर से हँस पड़ूँ और कहूँ, पण्डितजी, क्या आप मुझे बिलकुल बच्चा ही समझते हैं?

मुन्नी बोला-आख़िर उनका इसमें क्या उद्देश्य था?

-यह बताने की क्या अभी ज़रूरत ही रह गयी?-मन्ने बोला-वह स्टाम्प-वाला काग़ज़ था, मेरा दस्तख़त कराके वे उस पर कुछ भी लिख सकते थे, उसे वे किसी भी रक़म का सरख़त बना सकते थे, रेहनपट्टा लिख सकते थे...

-ओह!-मुन्नी बोल पड़ा-इतना नीच है वह!

-और क्या समझते हो तुम?-मन्ने बोला-इतना नीच न होता, तो हमारे साथ उतना बड़ा अन्याय करता? अब मुझे औरंगज़ेब कहता फिरता है!

दोनों हँस पड़े। थोड़ी देर बाद मन्ने प्रेम-पुलकित होकर बोला-मुन्नी एक बात कहूँ?

-कहो।

-मेरे मन में आता है कि अपनी सारी जायदाद मैं तुम्हारे नाम रजिस्टरी कर दूँ!-गद्‌गद्‌ होकर मन्ने बोला।

मुन्नी एक क्षण उसका मुँह तकता रहा। फिर बोला-क्यों?

आँखें झुकाकर, शर्माता-सा मन्ने बोला-योंही।

-फिर तुम्हारा क्या होगा?-मुस्कराता हुआ मुन्नी बोला।

-क्यों?-मन्ने जैसे हैरान होकर बोला-हमारा-तुम्हारा क्या कुछ अलग-अलग है?

-फिर तुम्हारा तुम्हारे पास ही रहे, तो इसमें क्या फ़र्क़ पड़ता है?-कहकर मुन्नी हँस पड़ा।

लेकिन मन्ने सहसा गम्भीर हो गया। बोला-मैं सच कहता हूँ!

-मैं कब कहता हूँ कि सच नहीं कहते?-मुन्नी बात टालता हुआ बोला-और कोई बात करो।

मन्ने ने उस समय सचमुच ही सच कहा था। लेकिन वही मन्ने किस तरह मुन्नी की ज़रूरत पर आँख चुरा गया था! उसने मुँह खोलकर एक शब्द भी नहीं कहा और मुन्नी अपनी पढ़ाई छोडक़र दूर मद्रास चला गया। यह सच है कि मन्ने उसकी मदद करने योग्य न था। लेकिन योग्यता ही क्या प्रेम की, मित्रता की शर्त है? क्या त्याग के लिए योग्यता का बन्धन किसी भी प्रकार स्वीकार्य हो सकता है? मन्ने क्या अपने ख़र्चे में से नहीं बाँट सकता था? ...और मुन्नी क्या कभी भी उस पर भार बनकर रहता? लेकिन नहीं, मन्ने ने इस तरह की कोई बात ही नहीं उठायी, वह चुप्पी साधकर सब-कुछ टाल गया और उसी दिन मन्ने ने यह स्वीकार कर लिया कि उसके प्रेम और मित्रता की मृत्यु हो गयी और आगे कभी भी वह इनका दम्भ न करेगा! वह इस योग्य ही अब न रहा। ...वह दुनियादार हो गया था। अपना स्वार्थ, अपनी भलाई समझने

लगा था, उस जैसे आदमी के लिए प्रेम कहाँ है, मित्रता कहाँ है, जिसका आधार ही त्याग होता है?

इसलिए महशर को लेकर उसके प्रेम का कोई सवाल ही नहीं उठता। फिर वह क्या चीज़ है, जिसने उलटी धारा बहा दी है? मन्ने सोचता और उसे लगता कि...कोई चीज़ है...शायद वह चीज़ बताने की नहीं, सिर्फ़ अनुभव करने की है। एक कोई चीज़ उसे महशर से मिली है और वह शायद उसी से दबा है, उसी के लिए महशर के प्रति कृतज्ञ है।

लेकिन इस कृतज्ञता के बोझ को वह अपने कमजोर कन्धों पर कब तक सम्हाले रहेगा? कहीं यह कृतज्ञता ही उसकी कमर न तोड़ दे? ...नहीं-नहीं, वह ऐसा नहीं होने देगा, इससे उसे उबरना ही होगा, बचना ही होगा! ...और उसने निश्चय किया कि वह साफ़-साफ़ सब-कुछ महशर को लिख देगा। ...और उसने एक पत्र लिखा और उसे बार-बार पढ़ा। फिर लगा कि यह तो कुछ सख्त हो गया है। और उसने दूसरा पत्र लिखा और उसे पढ़ा, तो लगा कि इसमें तो सारा मामला ही ख़ब्त हो गया है। और फिर उसने सोचना शुरू किया कि यह एक मियाँ-बीबी का मसला है, यह एक सारे जीवन के सम्बन्ध की समस्या है, यह नाजुक शीशे की तरह है, ज़रा हरका लगा और टूटा, तो कभी जुड़ने का नहीं। इस पर उसे ग़ौर से सोचकर कोई क़दम उठाना चाहिए, यों अफ़रा-तफ़री में कुछ नहीं करना चाहिए। वह पढ़ा-लिखा और समझदार आदमी है, भैया की तरह जाहिल नहीं कि अपनी घरेलू ज़िन्दगी का अलिफ़ ही ग़लत लिख बैठे।
...

महशर का मुबारकबाद का खत आया। उसने लिखा था कि उसके घर के लोग और गोंइयाँ मिठाई तलब कर रहे हैं। जल्द दस रुपये भेजें। और हाँ, एक बात तो मैं भूल ही गयी थी। आपकी यहाँ की आमद की ख़ुशी में आपकी ओर से मैंने अम्मा से दस रुपया उधार लेकर मिठाई बँटवायी थी। अब वह तक़ाज़ा कर रही हैं, उसे भी मेहरबानी करके भेज दीजिए, ताकि इस तक़ाजे से तो जान छूटे...

मन्ने तो जैसे जलकर राख ही हो गया! लानत है ऐसे मुबारकबाद पर! और ग़ुस्से से भरकर उसने तुरन्त बैठकर एक पत्र लिखा और महशर को जली-कटी सुनाकर उसने लिखा कि उसी की वजह से उसे इम्तिहान में दूसरा दर्जा मिला और उसका कैरियर ख़राब हो गया। ऊपर मिठाई तलब करके वह जले पर नमक न छिडक़े। और किसने कहा था कि वह उधार माँगकर लोगों को मिठाई बाँटती फिरे! वह नहीं जानता कुछ। ऐसी माँ उसकी समझ के बाहर है, जो अपनी बेटी से ही पैसों का तक़ाज़ा करे! वह नहीं

जानता था कि वे लोग ऐसे हैं, जो दिखावा तो इतना करते हैं, लेकिन अन्दर से इतने छोटे हैं! ...और आगे उसने लिखा था कि यह-सब उसके बस से बाहर की बात है। वह एक दमड़ी भी इस वक़्त उस पर खर्च नहीं कर सकता, उसके पास है ही नहीं, वह ख़र्च कहाँ से करे! ...आगे बात बिलकुल ही न बिगड़ जाय, इसलिए मजबूर होकर उसे यह-सब लिखना पड़ रहा है। ...

पत्र लिख चुका, तो उसका गुस्सा कुछ ठण्डा हो गया। ठीक है, अच्छा मौक़ा मिल गया लिखने का! खामखा का दर्दे-सिर आखिर कोई कब तक पाले?

पत्र चपतकर उसने जेब के हवाले किया और कुछ हल्का-हल्का-सा महसूस करते हुए वह कमरे में टहलने लगा।

तभी बद्दे ने आकर एक छोटा-सा भात से चिपकाया हुआ ख़त उसके हाथ में देते हुए कहा-बूबू ने यह ख़त दिया है और कहा है कि आप कोई ख़त भाभी को भेजें, तो उसी के साथ इसे भी भेज दें। और वह चला गया।

मन्ने उस ख़त को हाथ में लिये देर तक देखता रहा और अँगुलियों से मसलता-सा रहा। ...हुँ! यह भी भाभी को ख़त लिखने लगीं! क्या लिखना था इन्हें? और उसे अचानक यह ख़याल आया कि इसे खोलकर ज़रा देखा तो जाय कि क्या लिखा है इन्होंने? लेकिन वह हिचक गया। बहन का पत्र है भाभी के नाम। जाने क्या-क्या लिखा हो। क्यों देखे वह? उसे नहीं देखना चाहिए। लेकिन उसकी मन:-स्थिति इस समय स्वस्थ न थी। ऊपर से वह अपने को हल्का ज़रूर महसूस करे, लेकिन अन्दर आग धुँधुआ रही थी। ...और उसने फट से ख़त खोल दिया। ज़रा देखा तो जाय!

और बातों के अलावा उसमें लिखा था, भाभी, तुम्हारे बिना भैया बहुत उदास और परेशान रहते हैं। तुम उनके साथ ही क्यों नहीं आ गयी। मुझे भी घर सूना-सूना लगता है। कम-से-कम भैया की छुट्टी-भर तो तुम यहाँ आकर रह जाओ। मुझे यक़ीन है, तुम लिखोगी, तो भैया तुम्हें तुरन्त बुला लेंगे। मेरी क़सम, तुम उन्हें लिखो! ...

और जाने मन्ने पर कौन-सा भूत सवार हो गया कि आगे न पढक़र उसने चर्र-चर्र खत के टुकड़े-टुकड़े कर दिये। और फिर जैसे उसी से उसे सन्तोष न हुआ हो, उसने जेब से अपना ख़त भी निकालकर फाड़ डाला और मन-ही-मन चिल्ला उठा, नहीं जायगा, कोई भी ख़त नहीं जायगा! मैं उसे कोई ख़त लिखूँगा ही नहीं!

दो दिन तक फिर वह परेशान रहा और तीसरे दिन बीस रुपये का नहीं, पच्चीस रुपये का मनीआर्डर भेज दिया। लेकिन कूपन तक पर एक शब्द न लिखा। उस दिन बार-बार यह रुबाई उसके जेहन में गुनगुनाती रही :

ऐ दिल तेरी अदाए-वहशत देखी

तेरी नैरंगिए-तबीयत देखी

खुलता नहीं भेद कि ए दिल तुझमें

हँस देने की रोते-रोते आदत देखी

जुलाई का महीना आया, तो यह सवाल उठा कि एम.ए. वह कहाँ से करे? उस युनिवर्सिटी में फिर जाने का सवाल ही नहीं उठता था, क्योंकि यह उसने तय कर लिया था कि उर्दू से ही वह एम.ए. करेगा और उस युनिवर्सिटी में उसके साथ न्याय नहीं हो सकता था। न्याय हुआ होता, तो पर्चे ख़राब होने के बावजूद उसका पहला दर्जा कहीं नहीं गया था, पोज़ीशन कोई भले नहीं मिलता। उसे अंग्रेज़ी, इतिहास और उर्दू में क्रमश: अड़तालिस, उनसठ और चौंसठ प्रतिशत नम्बर मिले थे। अहमद हुसेन के ख़त से मालूम हुआ था कि उसे उर्दू में पचासी प्रतिशत नम्बर मिले थे। मन्ने को इसी बात का ग़म था कि अहमद हुसेन के पचासी के मुक़ाबिले उसे पचहत्तर भी नहीं मिल सकते थे? मन्ने जानता था कि यह होगा, लेकिन वह सोचता था अहमद हुसेन को उससे दो-चार नम्बर ही ज्यादे मिलेंगे, यह नहीं कि मन्ने का गला ही रेत दिया जायगा। सब यह जानते थे कि उर्दू में मन्ने के मुक़ाबिले का कोई विद्यार्थी नहीं था, फिर भी ऐसी धाँधली करते हुए उर्दू के हेड का हाथ नहीं काँपा। मन्ने के मन में यह बात कई बार उठी कि वह जाकर उनसे मिले और पूछे कि इससे मन्ने का कैरियर भले बर्बाद हो गया, उन्हें क्या मिला, अहमद हुसेन को क्या मिला, जबकि उर्दू में इतने नम्बर पाने के बावजूद उसे भी दूसरा ही दर्जा मिला?

मुसलिम युनिवर्सिटी और हिन्दू युनिवर्सिटी के नाम से ही उसे चिढ़ थी। यह कौन नहीं जानता कि इन संस्थाओं के जन्म के पीछे हिन्दू राष्ट्रवाद और मुसलिम क़ौमियत की संकीर्ण मनोवृत्ति थी और इन दोनों संस्थाओं ने शिक्षा-जैसी पवित्र चीज़ को भी साम्प्रदायिकता के रंग में रँग दिया था। इन संस्थाओं की स्थापना के बाद देश में कितने इस्लामिया...अहमदिया...सनातन...वैदिक...क्रिश्चियन आदि स्कूल और कालेज खुले, उनको गिनना आज मुश्किल है। यही नहीं, इस संकीर्णता को और भी आगे बढ़ाया गया और फ़िर्कों और जातियों के नाम पर स्कूल और कालेज खुलने लगे

और विद्यार्थियों में धार्मिक ही नहीं, फ़िर्केवराना और जातिवादी भावनाएँ भी भरी जाने लगीं। फिर आगे चलकर तो पुस्तकालयों, पत्र-पत्रिकाओं, अस्पतालों, पार्कों, होटलों, फ़र्मों और दुकानों के नामों के साथ भी यह संकीर्ण भावना जोड़ दी गयी। और यह घातक परम्परा आगे ही बढ़ती जा रही है। इस तरह की संस्थाएँ विद्यार्थी के कच्चे मस्तिष्क में जो विष भर रही हैं, उसका अनुमान कदाचित् ही कोई लगा पा रहा हो। लेकिन उसका परिणाम सामने है, शिक्षित समझदार लोगों में भी आज कितने साम्प्रदायिक भावना से अछूते हैं, कहना कठिन है और उसका सबसे भयंकर रूप आज देश की राजनीति में देखने को मिल रहा है। यह प्रवृत्ति देश को कहाँ ले जायगी, किस गढ़े में गिराएगी, कौन जाने!

लखनऊ के नाम से मन्ने के मन में एक डर हाई स्कूल के ज़माने से ही उर्दू को लेकर समा गया था। आठवें दर्जे में उसके साथ एक डिप्टी का लडक़ा पढ़ता था। वह लडक़ा लखनऊ का रहनेवाला था। एक दिन एक शब्द के उच्चारण पर डिप्टी के लडक़े और मौलवी साहब में बहस छिड़ गयी। मौलवी साहब पूर्बिया थे। वे लडक़े से पार न पा रहे थे। दरअसल वह लडक़ा जब बोलता था, तो सब लोग उसका मुँह तकते थे, इतनी उम्दा ज़बान पूरब में कहाँ सुनने को मिलती है! आख़िर मौलवी साहब मास्टर होने की हैसियत से उसे डाँटकर, उस पर रोब ग़ालिब कर, उसे चुप कराने लगे, तो वह तिनक गया और बोला-माफ़ कीजिएगा, मौलवी साहब, हमारे यहाँ की मेहतरानियाँ भी आपसे अच्छी ज़बान बोलती हैं, आप मेरा मुक़ाबिला क्या करेंगे, उर्दू जिसके घर की लौंडी है!

मन्ने उस बात को कभी नहीं भूला। आज भी वह किसी लखनौए से बात करते हुए घबराता है, उसे डर लगता है कि कौन जाने वह ज़बान के जोम में आकर उसकी माँ को गाली न दे बैठे!

और अन्त में उसने कलकत्ता युनिवर्सिटी की बात तै की। दूरी के जादू के साथ कलकत्ता में कुछ और भी खूबियाँ मन्ने ने ढूँढ़ निकाली। क्रान्तिकारियों के रोमांचक प्रदेश होने के कारण मन्ने को यह विश्वास था कि वहाँ साम्प्रदायिक द्वेष और पक्षपात, कम-से-कम युनिवर्सिटी में न होगा और साथ ही उर्दू में वह वहाँ उसी तरह रहेगा, जैसे जहाँ रूख न परास वहाँ रेंड़ परधान! फिर वहाँ उसके पड़ोस के एक जुलाहे की चाय की दुकान भी थी, क़स्बे के अपने परिचित एक हकीम भी थे और सबके ऊपर वहीं कहीं कैलसिया भी रहती है। हो सकता है कि इन-सबों से उसे वहाँ रहने में कुछ मदद मिल सके।

मन्ने ने जैसा सोचा था, वहाँ सब-कुछ वैसा ही मिला। जुलाहे ने उसे एक सस्ता-सा कमरा दिलवा दिया और एक होटल में रियायत से उसके खाने का बन्दोबस्त करा दिया। हकीम साहब ने पहले तो हैरत ज़ाहिर की। लेकिन मन्ने ने जब उन्हें अपनी सही स्थिति से परिचित कराया, तो उन्होंने दौड़-धूपकर दो अच्छी-अच्छी ट्यूशनें दिला दीं। युनिवर्सिटी में उसके दर्जे में सिर्फ़ सात विद्यार्थी थे और मौलाना बहुत ही शरीफ़ आदमी थे। वे उसके बेहद मशकूर थे कि वह इतनी दूर से उनके यहाँ पढ़ने आया था। उन्होंने उसकी फ़ीस भी माफ़ करवा दी।

मन्ने को यह-सब हो जाने पर बड़ा सकून मिला। उसे पूरी उम्मीद हो गयी कि जो बिगड़ी है, अब ज़रूर बन जायगी, उसका कैरियर अब ठीक रास्ते पर लग गया।

शुरू से ही उसने मेहनत शुरू कर दी। कलकत्ता के सभी आकर्षणों से अपने को बचाकर वह काम में जुट गया।

लेकिन भाग्य ने यहाँ भी उसका साथ न छोड़ा था। मन्ने भाग्यवादी न था, लेकिन वह इसे भाग्य न कहे तो और क्या कहे? तीन महीने भी अभी न बीते थे कि एक रात आठ बजे वह ट्यूशन से लौटा, तो उसे जाड़ा लगा और देखते-ही-देखते वह काँपने लगा। कम्बल ओढ़कर लेटा, तो बुखार ने उसे धर दबाया और वह होश-हवास खो बैठा।

सुबह उसे होश आया, तो वह बेदम हो गया था। उठा ही न जा रहा था। फिर भी किसी तरह जोर लगाकर उठा और दरवाजे से रिक्शा करके हकीम साहब के यहाँ पहुँचा।

दवा लेकर चाय की दूकान पर आया और जुलाहे से बताया, तो वह बोला-यह तो कलकत्ते की सौगात है। हम हैरान थे कि आपको अब तक यह क्यों नहीं मिली! ख़ैर, घबराने की कोई बात नहीं, यहाँ तो खाने-पीने की तरह रोज़-रोज़ की यह बात है। मैं टिकिया मँगाता हूँ, खाकर चाय पी लीजिए।

मन्ने ने हकीम साहब की दी हुई पुडिया दिखाते हुए कहा-इसकी औंटी बनवा दो, यही पीऊँगा।

जुलाहे ने कहा-आप इस चक्कर में न पड़ें, जो मैं कहता हूँ, कीजिए। आप देखते नहीं, भोगते-भोगते मेरी जिल्द काली पड़ गयी है। इसकी बस एक ही दवा है, सफ़ेद टिकिया और कुछ नहीं!

मन्ने की तबीयत अन्दर-ही-अन्दर कुछ भारी थी, लेकिन कोई तकलीफ़ नहीं थी। रोज़ की तरह उसने होटल में खाना खाया और युनिवर्सिटी चला गया और फिर वहीं से ट्यूशनों पर।

लेकिन जब लौटने लगा, तो रास्ते में ही उसके रोंयें खड़े होने लगे और फिर वही रात की हालत हो आयी।

दो हफ्ते तक ऐसे ही चलता रहा। उसने हकीम साहब की औंटी भी पी और सफ़ेद टिकियाँ भी खायीं, लेकिन रोज़ रात को जड़इया उसे झोर जाती। ...फिर कमजोरी बढ़ गयी। जी में आता कि घुटनों में सिर डाले चुपचाप बैठे रहो, कहीं मक्खी भी बैठ जाय, तो उड़ाने की तबीयत न होती। उसका युनिवर्सिटी जाना बन्द हो गया। कई दिन तक वह चाय की दुकान पर नहीं गया, तो जुलाहा देखने आया। देखकर बोला-यह तो जड़ पकड़ गयी मालूम होती है। देस जाकर हवा-पानी बदल आइए। वहाँ की हवा लगते ही सब ठीक हो जायगा।

मन्ने ने कहा-दो-चार रोज़ और देख लेता हूँ।

पूछते-पूछते बेचारे मौलाना भी एक दिन जुलाहे के साथ आ पहुँचे और उसे उस हालत में देखकर उन्होंने उसे बहुत डाँटा कि परदेस में इस तरह अकेले पड़े हो, मेरे यहाँ क्यों नहीं चले आये? फिर बोले-चलो, उठो, यहाँ पड़े-पड़े तो तुम मर जाओगे।

और वे उसे अपने घर ले गये। वहाँ उसे नीचे एक कमरा दे दिया। उस दिन रात को उसे बुखार न आया, इसलिए मौलाना उसे डाक्टर के यहाँ नहीं ले गये। दूसरे दिन भी वह ठीक रहा। लेकिन तीसरे दिन शाम ढलते ही उसका बदन टूटने और दाँत कटकटाने लगे। और थोड़ी ही देर में बुखार में बुत हो वह अण्ड-बण्ड बकने लगा।

दूसरे दिन सुबह डाक्टर के यहाँ से सूई लगवाकर मौलाना के साथ मन्ने लौटा, तो दरवाजे पर जुलाहे को एक औरत के साथ खड़े देखा। पहली नज़र में वह उसे पहचान न पाया, लेकिन औरत ने आगे बढक़र जब सलाम किया और कहा कि बाबू, यह आपकी का हालत हो गयी है, तो मन्ने ने पहचाना कि यह कैलसिया है।

कैलसिया सचमुच बदल गयी थी। वह बहुत मोटी हो गयी थी, उसका रूप-रंग बदल गया था। वह सोने के जेवरों से लदी थी, उसके सामने के दो दाँतों में लाल मिस्सी के ऊपर सोने की बत्तीसी चमक रही थी और माँग में बंगालिनों की तरह ढेर-सा सिन्दूर पड़ा था! मन्ने उसे देखता ही रह गया।

मौलाना ने उसे सहारा दे कमरे में पहुँचा दिया और उसके मेहमानों से कहा कि वे कमरे में जाकर उससे मिल लें।

मन्ने चाहता था कि चारपाई पर बैठकर ही बातें करे, लेकिन उससे बैठा न जाता था। मजबूरन वह लेट गया। जुलाहा और कैलसिया उसके पास फ़र्श पर बिछी शीतलपाटी पर बैठ गये।

दो वर्षों के अन्दर ही कैलसिया क्या-से-क्या हो गयी थी, उसमें कितना बड़ा परिवर्तन हो गया था! मन्ने उसे इस रूप में कभी देखेगा, इसकी उसे कल्पना भी न थी। इस आश्चर्यजनक परिवर्तन को आत्मसात करना उसके लिए असम्भव हो रहा था। उसके आश्चर्य और उत्सुकता की सीमा न थी। वह एक क्षण में ही सब-कुछ जान लेना चाहता था। बोला-कैलसिया!

-हमारी आप बाद में पूछिएगा,-उसकी बात काटकर कैलसिया बोली-पहले आप अपनी बताइए! इतने दिनों से आप यहाँ आये हैं, हमें ख़बर भी नहीं दी। आपकी तबीयत भी दो-तीन हफ्ते से ख़राब है, फिर भी हमें याद नहीं किया। का ऐसे ही गैर थे हम? आज यह दरगाही हमें न बताता तो सायत हम आपको देख भी न पाते!

-नहीं, ऐसी बात नहीं,-मन्ने ने स्याह पड़ी पलकें झपकाकर कहा-मुझे तुम्हारा पता ही कहाँ मालूम था?

-काहे को झूठ बोलते हैं?-तिनककर कैलसिया बोली-हमारा पता मालूम करना का कोई इतनी मुसकिल बात थी? आप चाहते, तो गाँव से ही हमारा यहाँ का पता मालूम हो जाता। आखिर चिठ्ठी-पतरी तो आती-जाती रहती ही है। यहाँ भी हमारी तरफ़ का कौन ऐसा आदमी है, जो हमारा पता न जानता हो। इस दरगाही से ही आपने पूछा होता तो यह बता देता। इसके यहाँ तो हमारे यहाँ से रोज सुबह-साम दूध आता है।

मन्ने इसका क्या जवाब दे? क्या सच-सच बता दे कि उसने संकोचवश उसका पता किसी से नहीं पूछा, या यह कि उससे मिलने का उसमें साहस ही नहीं था, वह उसके सामने हमेशा अपने को शर्मिन्दा महसूस करता है कि वह उसके लिए कुछ भी न कर सका? लेकिन बोला-अभी तो मैं यहाँ ठीक से जम भी न पाया था कि बीमार पड़ गया। सोचा था, ज़रा ठीक-ठाक हो जाय, तो तुम्हारा पता लगाऊँ और इतमिनान से तुमसे मिलूँ। यहाँ आकर तुमसे न मिलता, ऐसा कैसे हो सकता था?

-खूब हो सकता था, बाबू!-शिकायत के स्वर में कैलसिया बोली-आपसे कोई भी बात अनहोनी नहीं! एक मियाँ थे और एक आप हैं!-कैलसिया का स्वर भर्रा गया-हमें बड़ा अफसोस होता है, बाबू! सोचते हैं, तो मन जाने कैसे कचोट उठता है, कि बाबू यहाँ आये और बीमार पड़ गये फिर भी हमें याद नहीं किया। भला हो इस दरगाही का नहीं तो आप...

-नहीं, कैलसिया, ऐसा तू मत सोच,-मन्ने ने सिर हिलाते हुए कहा-मैं ज़रूर तुझसे मिलता!

-यह तो भगवान ही जानते हैं कि आप सच कहते हैं या झूठ। लेकिन हमें विश्वास नहीं होता।-सिर झुकाकर कैलसिया ने कहा। फिर एक क्षण बाद सहसा सिर उठाकर वह बोली-खैर, जो हुआ सो हुआ, अब तो हमारे यहाँ चलेंगे न? इस हालत में हम अकेले आपको नहीं छोड़ सकते। जब तक हमें मालूम नहीं था, आप कैसे रहे, कौन जाने! लेकिन अब देख-सुनकर हम आपको इस तरह नहीं रहने देंगे। आप इसी दम चलिए!

मन्ने संकोच से भरकर कुछ बोल न पा रहा था। कैलसिया को देखकर यह स्पष्ट ही था कि उसकी हालत बहुत अच्छी है। फिर भी जिसके लिए अब्बा ने इतना किया और ख़ुद होकर जिसके लिए अब्बा की एक ख़ाहिश भी वह पूरी न कर सका; उसी के यहाँ उलटे वह इस हालत में जाय और उसका एहसान ले, मन्ने के लिए यह सह्य न था। आगे ही वह इस औरत के प्रति कितना अकृतज्ञ सिद्ध हो चुका है! उलटे अब उसका एहसान लेकर वह मुँह दिखाने लायक़ कैसे रहेगा? स्वयं अपने ही सामने वह कितना नीच बन जायगा!

उसका संकोच ताड़कर कैलसिया बोली-संकोच न कीजिए, बाबू! आपकी दुआ से हमारे यहाँ कोई कमी नहीं है। आपको कोई तकलीफ हम नहीं होने देंगे। वहाँ आपको सब तरह का आराम रहेगा। उसे अपना ही घर समझें। अपने घर चलने में इतना सोचने-समझने की का जरूरत है?

-हाँ, बाबू!-इतनी देर बाद दरगाही ने मुँह खोला-कैलसिया के अब तो बड़े ठाठ हैं यहाँ! आप...

-चुप!-कैलसिया ने उसे डाँटकर कहा-गरीब भी हम होते तो का इन्हें इस हालत में छोड़ देते? तुम जानते नहीं, मियाँ से हमारा कैसा नाता था!

-यह भी क्या कोई कहने की बात है?-दरगाही बोला-तभी तो हम भी बाबू से कहते हैं कि तुम्हारे यहाँ चले चलें।

-ऐसे बोलो!-कैलसिया जोर देकर बोली-तुम लोगों के दिल में भी कम खोट नहीं, नहीं तो का बाबू के यहाँ आते ही तुमने हमें खबर न दी होती! हम सब जानते हैं। जो हो, तुम लोगों के लिए आखिर हम चमार की लडक़ी ही तो हैं।

-इसकी बात में तू मत पड़, कैलसिया-मन्ने ने उसे बिगड़ते हुए देखकर कहा-मैं तुम्हारे यहाँ ज़रूर आऊँगा, लेकिन इस वक़्त माफ़ कर दे। अभी कल ही मैं यहाँ आया हूँ। जिन्हें तुमने अभी देखा है वे मेरे मास्टर हैं, बड़े शरीफ़ आदमी हैं, मुझे बहुत मानते हैं। इस तरह यहाँ से चला जाऊँगा, तो उन्हें बहुत बुरा लगेगा। तू तो अपनी आदमिन है, तुझे मैं समझा-बुझा लूँगा, लेकिन...

-नहीं, बाबू!-सिर हिलाकर कैलसिया बोली-यह नहीं हो सकता! आप खुद उनसे न कह सकें तो हम कह लेंगे। इसमें उनके बुरा मानने की का बात है, अपना घर रहते कोई ग़ैर के यहाँ काहे को ठहरे?

-ज़रा धीरे से बोल, कैलसिया!-मन्ने घबराकर बोला-तू जानती नहीं, इन्हें मैं किसी तरह नाराज़ नही कर सकता। मैं वादा करता हूँ कि दो-चार दिन में ज़रा तबीयत सम्हलते ही मैं तुम्हारे यहाँ ज़रूर आऊँगा। इस वक़्त तू मेरी बात मानकर मुझे माफ़ कर दे।

कैलसिया का दमकता चेहरा सहसा उदास हो गया। फिर अचानक जाने उसके मन में कैसा भूचाल आ गया कि पलटकर उसने दरगाही का हाथ पकड़ा और उसे उठाते हुए, क्षोभ में काँपते स्वर में बोली-चल, दरगाही! कोई अपना बनाने से ही अपना थोड़े बन जाता है!

और सच ही दूसरे क्षण वह कमरे से बाहर थी। दरगाही उसके पीछे-पीछे वैसे ही चला गया, जैसे अफ़सर के पीछे अर्दली।

मन्ने के सामने कैलसिया का वह एक क्षण का बिजली की तरह का रूप और उसके वे कुछ शब्द बार-बार कौंधते और अदृश्य होते रहे और उसकी आँखें झपक-झपक जाती रहीं और फिर सहसा उसके अधरों पर एक क्षीण मुस्कान की रेखा खिंच आयी। वह होंठों में ही बुदबुदा उठा-तो कैलसिया उस पर ग़ुस्सा भी सकती है! ...यह ग़ुस्सा होने का अधिकार उसे कहाँ से मिला है? उसका तो व्यक्तिगत रूप से उसके साथ कोई ऐसा

सम्बन्ध नहीं रहा कि उसे उस पर इस तरह ग़ुस्सा होने का अधिकार मिले। बल्कि मन्ने ने तो अब्बा के ज़रिये मिला उसका सम्बन्ध भी तोड़ने में कोई कसर नहीं उठा रखी। फिर...फिर? और उसके अधरों की मुस्कान की रेखा कुछ चौड़ी हो गयी और फिर सहसा उस पर व्यथा की छाया दौड़ गयी। मन्ने अचानक ही तड़प उठा। उसके जी में आया कि वह रोये, इतना रोये, इतना रोये, कि उसका सारा शरीर ही आँसू बनकर बह जाय! ...मुन्नी...बाबू साहब...भाभी...कैलसिया...और शायद महशर भी...कितने...कैसे-कैसे प्यार करनेवाले, उस पर अपने को न्यौछावर करनेवाले मिले! ...और वह...वह...उसने उनमें से एक के लिए भी क्या किया? ...आह! इतना, इतने सच्चे इन्सानों, निस्वार्थ मानवों, त्यागमय प्राणों का ढेर-सारा प्यार पाकर भी वह क्या बना, उसने क्या किया? ऐसा सौभाग्यशाली होकर भी वह कैसा अभागा रह गया कि जिसने सिर्फ़ लेना जाना और देने के सौभाग्य को सदा अपने ही हाथों से निकल जाने दिया। क्यों? क्यों इसी आशा में न कि वह एक दिन अपनी पूँजी से अपने को बना पाएगा, सँवार पाएगा, वह इसका क्षरण, रंचमात्र भी, क्यों होने दे? तुफ़ है इस पूँजी पर! तुफ़ है उसके इस स्वार्थ पर! इस पूँजी से वह क्या बनेगा, और अगर वह कुछ बन भी गया, तो उस बनने पर लानत है, जो मामूली इन्सानियत से भी गिरकर बनता है! जब इन्सानियत ही नहीं,तो क्या रह गया!

इस समय उसे सबकी याद आ रही थी, सबकी सब बातों की याद आ रही थी और सबके ऊपर अपने कारनामों की याद आ रही थी। ये पश्चात्ताप के क्षण थे, जो दौरे की तरह उसके जीवन में अक्सर आते थे और उसका दिल ज़रा-सी गर्मी पाकर मोम की तरह पिघल उठता था! ...इन पवित्र क्षणों की वह क़द्र करता था, और चाहता था कि ये क्षण हमेशा आते रहें और उन क्षणों में वह उन इन्सानों को पवित्र पुस्तक की तरह पढ़ता रहे! ऐसा करने से उसे एक प्रकार का सकून मिलता था कि वह उन्हें भूला नहीं है, वह कृतघ्न नहीं है, अकृतज्ञ नहीं है, एक दिन आयगा, एक दिन आयगा, जब वह शायद कुछ कर सके, अपना बोझ कुछ हल्का कर सके, अपना चेहरा उजला कर सके...और ऐसे क्षणों में वह सच ही मन-ही-मन कई घटनाओं का आद्यन्त परायण कर जाता...

आठवें दर्जे की बात है। स्कूल की छुट्टी के बाद, कुछ नाश्ता-पानी करके रोज़ शाम को मन्ने शहर के पुस्तकालय में अख़बार पढने जाता था। उसे खेल से कोई दिलचस्पी न थी। लेकिन मुन्नी का यह समय स्कूल के मैदान में ही बीतता था। उसे हाकी और फ़ुटबाल, दोनों खेलों में बेहद दिलचस्पी थी। एक दिन शाम को लडक़े अभी खेल ही रहे थे कि अचानक पास की सडक़ पर एक शोर मच गया। लोग जान छोडक़र भागते हुए

नज़र आये। लडक़ों ने देखा, तो उन्होंने खेल बन्द कर दिया और सडक़ की ओर भागकर यह जानना चाहा कि आखिर बात क्या है?

पूछने पर कुछ बताने के लिए कोई भी रुकने का नाम न लेता। सब भागते हुए बस एक ही बात चिल्ला रहे थे, हिन्दू-मुसलिम दंगा हो गया! लडक़ों के चेहरों पर दहशत छा गयी, वे एक-दूसरे का मुँह तकने लगे। इसी बीच वार्डन ने आकर डाँटा कि सडक़ पर खड़े-खड़े वे क्या कर रहे हैं, सब अपने-अपने कमरे में चले जायँ!

लडक़े अपने-अपने कमरे में चले गये और हास्टल के फाटक में ताला लगा दिया गया। वार्डन ने हाज़िरी ली, तो मालूम हुआ, चालीस लडक़े गैरहाज़िर थे। सब शहर में किसी-न-किसी काम से गये थे। सब चिन्तित हो उठे कि न जाने उन पर क्या गुज़री!

वार्डन सख्त हिदायत देकर चले गये कि कोई भी अपने कमरे से बाहर न निकले।

मुन्नी अपने अँधेरे कमरे में परेशान-हाल टहल रहा था। लालटेन जलाने की भी सुध उसे न थी। बीच चौक में पुस्तकालय है, चारों ओर हिन्दू बस्ती से घिरा हुआ। जाने मन्ने पर क्या बीती! सोच-सोचकर मुन्नी की जान सूख रही थी। पूरे हास्टल में एक अजीब तरह का खौफ़नाक सन्नाटा छा गया था, कहीं से कोई शब्द न आ रहा था। कोई भी खटका होता, तो मुन्नी लपककर ओसारे में आ, फाटक की ओर देखता कि मन्ने तो नहीं हैं। लेकिन फाटक पर लालटेन की रोशनी में सिर्फ़ चौकीदार का साया दिखाई देता और मुन्नी फिर कमरे में जा उसी उधेड़-बुन में लग जाता।

क़रीब एक घण्टे बाद पुलिस की लारी क़र्फ़्यू की सूचना देती हुई सन्नाटे को और भी भयावना बनाकर चली गयी, तो सहसा मुन्नी को रोना आ गया। वह चारपाई पर बैठ सिसक-सिसककर रोने लगा। उसकी समझ में न आता था कि वह क्या करे। रह-रहकर मन में एक हूक उठती थी और उसकी रुलाई में जैसे ज्वार आ जाता था। जाने मन्ने को क्या हुआ? कहीं...

रोज़ की तरह आठ बजे खाने की घण्टी बजी। मुन्नी के कानों में टनटनाहट की एक बारीक रेखा खींचकर घण्टी बन्द हो गयी, लेकिन वह उसी तरह माथा हथेली पर रखे बैठा रहा और मन-ही-मन बिलखता रहा।

बड़ी रात हो गयी। सन्नाटा और गहरा हो गया, तो जाने मुन्नी के मन में क्या आया कि वह कमरे से निकला और अपनी आँखें पोंछते हुए फाटक पर जा पहुँचा।

चौकीदार ने आहट सुनी, तो चौंककर स्टूल से उठता हुआ बोला-कौन?

मुन्नी फाटक के सीख़चों से मुँह सटाकर, बुझे गले से बोला-मैं हूँ, मुन्नी।

-क्या बात है, बाबू?-चौकीदार उसके पास आकर बोला-आप अभी तक सोये नहीं?

-कोई शहर से आया है?-मुन्नी ने पूछा।

-नहीं, फाटक बन्द होने के बाद तो कोई भी नहीं आया। क्यों, आपके भी कोई साथी बाहर रह गये हैं क्या?

-हाँ, मन्ने अभी तक नहीं आया, पता नहीं उस पर क्या बीती? तुम ज़रा फाटक खोलो, मैं...

-यह आप क्या कहते हैं, बाबू?-चकित होकर चौकीदार बोला-बार्डन साहब की कड़ी हिदायत है कि सुबह छै बजे के पहले फाटक न खुले। फिर फाटक खुलकर ही क्या होगा? आपने सुना नहीं, कम्पू लग गया है। कोई भी बाहर दिखाई दे गया, तो पकड़ लिया जायगा। आप जाकर सो रहिए। सुबह देखा जायगा।

-तुम खोल तो दो!

-पागल हुए हैं क्या, बाबू? आप अपने कमरे में जाइए, बार्डन साहब को तो आप जानते हैं न? कहीं भनक लग गयी, तो...

-कोई लडक़ा शहर से आएगा तो क्या तुम फाटक नहीं खोलोगे?

-नहीं, फाटक तो छै बजे के पहले किसी भी हालत में नहीं खुलेगा। बार्डन साहब का हुकुम है कि कोई आये तो उनके कुवाटर में पहुँचा दिया जाय।

-फिर मुझे कैसे मालूम होगा कि मन्ने आया कि नहीं?

-अब कोई आ ही नहीं सकता। पुलिस गस्त लगा रही है।

-नहीं, मन्ने ज़रूर आयगा! उसे मालूम है कि वह नहीं आया, तो मेरी क्या हालत होगी!

-बाबू, आपकी बात मेरी समझ में नहीं आती। आप जाकर आराम कीजिए। सुबह देखिएगा।

-यहाँ फाटक के पास मैं बैठा रहूँ?

-क्या कहते हैं, बाबू?-हैरान होकर चौकीदार बोला-यहाँ बैठकर आप क्या करेंगे?

-उसकी राह देखेंगे, वह ज़रूर आयगा! आये बिना रह ही नहीं सकता!

-उन्हें आना होता, तो कबके आ गये होते। आप इतनी-सी बात नहीं समझते? कहीं बार्डन साहब गस्त पर आ गये...

-मैं इधर छुपकर बैठ जाता हूँ।

-अब जो आपके दिल में आये, कीजिए,-झल्लाकर चौकीदार बोला-आप तो बड़े जिद्दी मालूम होते हैं!

मुन्नी रात-भर वहाँ बैठा टक-टक फाटक की ओर देखता रहा और उसके अन्दर रुदन का ज्वार उबलता रहा। बीच-बीच में चौकीदार की आवाज़ सुनाई दे जाती-बाबू, आप अपनी जान क्यों साँसत में डाले हुए हैं; जाकर आराम कीजिए न!

मन्ने को न आना था न आया।

वह काली रात कैसे कटी, मुन्नी ही जानता है। सुबह हुई, तो बिना किसी डर के, बिना कुछ सोचे-समझे वह चौक की ओर भागा। सडक़ों पर मुश्किल से इक्के-दुक्के आदमी आ-जा रहे थे, वे भी खौफ़ खाये हुए, चौकन्ने। लेकिन मुन्नी को तो जैसे स्थिति का ज्ञान ही न हो। उसकी आँखों के सामने बस मन्ने नाच रहा था।

पुस्तकालय बन्द था। वहाँ एक चिडिय़ा का भी पता न था। सदा गुलज़ार रहनेवाला चौक जैसे श्मशान बना हुआ था। दूकानें बन्द, सडक़ें सूनी, वातावरण भयावना। नुक्कड़ पर बेंचों पर बैठी हथियारबन्द पुलिस ऐसी दिखाई दे रही थी, जैसे श्मशान पर गिद्धों का एक झुण्ड।

एक ने जोर से मुन्नी को पुकारा-ऐ छोकरे!

मुन्नी इस आशा से उनके पास पहुँचा कि शायद उन्हीं से कुछ मालूम हो! लेकिन वहाँ तो उसके लिए डाँट रखी हुई थी। एक सिपाही ने डाँटकर कहा-कहाँ इधर-उधर घूम रहा है? जान देना चाहता है क्या? भाग अपने घर!

लेकिन मुन्नी ने बिना घबराये हुए कहा-यहाँ पुस्तकालय में रात मेरा दोस्त अख़बार पढऩे आया था...

-हम कुछ नहीं जानते!-एक दूसरा फटकारते हुए बोला-भागों यहाँ से! कुछ पता लगाना हो, तो कोतवाली जाओ!

मुन्नी कोतवाली की ओर भागा। वहाँ सहन में ही लाशों का ढेर लगा हुआ था। मुन्नी का कलेजा मुँह को आ गया। वह धडक़ता हुआ दिल लिये, बिना किसी से पूछे-ताँछे एक-एक लाश को देखने लगा। लेकिन उनमें मन्ने नहीं था। वह एक ओर खड़ा होकर सोचने लगा कि अब क्या करे? तभी एक सिपाही उसके पास आकर बोला-क्या देख रहा है? तेरे घर का भी कोई मारा गया है क्या?

-मेरा दोस्त...

-इनमें उसकी लाश है क्या?

-नहीं।

-तो उधर हवालात की ओर जा। शायद वहाँ बन्द हो। लोग छोड़े जा रहे हैं।

मुन्नी उधर गया, तो सैकड़ों लोगों का झुण्ड हवालात से निकल रहा था। वह एक ओर खड़ा हो उनमें मन्ने को ढूँढऩे लगा। उसके सामने से झुण्ड निकल गया, लेकिन मन्ने उसमें दिखाई नहीं दिया। मुन्नी की निराशा की सीमा न रही। उसकी वही हालत थी, जो उस माँ की होती है, जो मेले में अपने खोये बेटे को सब जगह खोजकर हार मान गयी हो और उसकी निराशा की सीमा न हो।

मुन्नी अब क्या करे? हारा-थका, शोकमग्न, धीरे -धीरे भारी पाँव उठाता हुआ वह वहाँ से चला,तो अचानक ही उसके दिमाग़ में एक विचार घटाटोप अँधेरे में बिजली की तरह कौंध उठा कि शायद मन्ने हास्टल में पहुँच गया हो। और वह सडक़ पर दौड़ने लगा।

हास्टल में पहुँचा, तो उसका कमरा वैसे ही खाली था। उसका कलेजा फिर धक-से हो गया। खड़े होने में भी अब वह अपने को असमर्थ पा रहा था। वहीं किवाड़ का सहारा लेकर वह चौखट पर बैठ गया। उधर से गुज़रते हुए चपरासी ने उसकी ओर देखा, तो ठिठककर बोला-आप यहाँ क्यों बैठे हैं? कामन रूम में मीटिंग हो रही है। हेडमास्टर साहब आये हैं। जाइए।

मुन्नी को फिर आशा बँधी, शायद मन्ने वहीं हो। वह उठकर कामन रूम की ओर चल पड़ा।

मीटिंग चल रही थी। हेडमास्टर साहब बोल रहे थे। सभी लडक़े ख़ामोश कुर्सियों पर बैठे थे। मुन्नी पागल की तरह एक ओर खड़ा होकर लडक़ों की भीड़ में मन्ने को ढूँढऩे लगा। उसको उस हालत में पाकर सभी लडक़े उसकी ओर आँखें फाड़-फाडक़र देखने लगे। हेडमास्टर साहब की उस पर नज़र पड़ी, तो उन्होंने वार्डन की ओर देखा। वार्डन लपककर मुन्नी के पास पहुँचे और उसका बाजू जोर से पकडक़र बोले-इस तरह क्या देख रहे हो? तुम कहाँ चले गये थे? चलो बैठो, वहाँ!

मुन्नी की आँखें वहाँ कहीं मन्ने को न पाकर भरी आ रही थीं। लडक़ों में ही देखता हुआ वह बोला-मास्टर साहब, मन्ने नहीं आया क्या?

-नहीं, वह नहीं आया। सत्रह लडक़े और लापता हैं। तुम बैठो।-और उन्होनें उसे पास की एक ख़ाली कुर्सी पर बैठा दिया।

हेडमास्टर साहब हिन्दू-मुस्लिम एकता पर भाषण दे रहे थे, लेकिन मुन्नी की समझ में कुछ भी न आ रहा था। रह-रहकर उसकी रुलाई फूट पडऩा चाहती थी और वह सारा जोर लगाकर उसे रोकने में ही लगा था।

अन्त में हेडमास्टर साहब ने कहा-कलक्टर साहब के आदेशानुसार स्कूल दस दिन बन्द रहेगा। आप लोग जैसे भी हो आज छ: बजे के पहले-पहले अपने-अपने घरों को रवाना हो जायँ।

मुन्नी अपने कमरे के दरवाजे पर दोहपर तक दुखी और चिन्तित बैठा रहा। न उसने मुँह धोया, न नाश्ता किया, न खाना ही खाया। महराज पूछकर चला गया था कि आपका भोजन बनेगा कि आप चले जाएँगे। मुन्नी ने कह दिया था कि भोजन नहीं बनेगा।

उसका गाँव बीस मील दूर है। आठ मील तक एक्का जाता है, उसके आगे पैदल ही चलना पड़ता है। अभी से न चला, तो आज गाँव नहीं पहुँच पाएगा। शाम को हास्टल बन्द हो जायगा। मुन्नी क्या करे, वहाँ से हटने को उसका मन न कर रहा था। वह बिल्कुल बेदम-सा हो रहा था।

हाथ में झोले लटकाये उसकी ओर के दो विद्यार्थी उसके पास आये।

एक बोला-इस तरह क्यों बैठे हो? चलोगे नहीं?

मुन्नी ने सूखी आँखें उठाकर कहा-मन्ने नहीं आया।

-शायद वह गाँव चला गया हो,-दूसरे ने कहा-तुम चलो, तीन जने हो जाएँगे तो एक्का तुरन्त चल पड़ेगा। दिन रहते गाँव पहुँच जाएँगे। आख़िर चलना तो तुम्हें भी है।

मुन्नी सिर झुकाये थोड़ी देर खामोश बना रहा। आख़िर जाना तो पड़ेगा ही, नहीं वह रहेगा कहाँ? हो सकता है, मन्ने गाँव...लेकिन यह कैसे हो सकता है? उसे छोडक़र मन्ने अकेले गाँव कैसे जा सकता है? बोला-यह कैसे हो सकता है?

दूसरे लडक़े ने उसकी बाँह पकडक़र उठाते हुए कहा-अम्या, चलो, क्यों ख़ामख़ाह के लिए वक़्त ख़राब कर रहे हो? चलना तो है ही, देर हो जाएगी तो एक और मुसीबत आन खड़ी होगी! उठो, ताला बन्द करो!

मुन्नी ने ताला बन्द करके कहा-ज़रा रुको, चाभी वार्डन साहब को दे आऊँ, शायद मन्ने आये।-और वह वार्डन साहब के क्वार्टर की ओर चला गया। ...

रास्ते में दो मील एक्का चला होगा कि उधर से आते हुए एक एक्के से पुकार सुनाई दी-मुन्नी! मुन्नी!

चौंककर मुन्नी ने देखा, मन्ने के अब्बा अपने एक्के से उतरकर उसकी ओर लपके आ रहे हैं, चेहरे का रंग उड़ा हुआ, बेहद परेशान! मुन्नी ने अपना एक्का भी रुकवाया और उतर पड़ा।

मन्ने के अब्बा ने शंकित स्वर में कहा-मेरा मन्ने कहाँ है?

मुन्नी की वह आशा भी टूट गयी। एक क्षण तक उसके मुह से बकार ही न फूटा। फिर बोला-वह घर नहीं पहुँचा?

-नहीं तो!-बिलखते हुए-से स्वर में वे बोले-घर पहुँचा होता तो मैं क्यों शहर जाता? आज सुबह ही दंगे की ख़बर मिली। वह...

-वह कल शाम को अख़बार पढऩे चौक गया था, फिर नहीं लौटा। मैंने सब जगह ढूँढ़ा, कहीं भी नहीं मिला...

-ओह!-पलटते हुए मन्ने के अब्बा बोले-अच्छा, तुम जाओ।

-मैं भी आपके साथ चलूँ?-चिल्लाकर मुन्नी बोला।

-नहीं, तुम जाओ। तुम्हारे माँ-बाप भी परेशान होंगे।-और वे कूदकर एक्के पर बैठ गये।

मुन्नी वहीं थथमा उन्हें देखता रहा। उनकी व्याकुलता को वह समझ रहा था, लेकिन उसे अफ़सोस था कि शायद उसकी व्याकुलता को वे नहीं समझते। एक आशा थी, वह भी टूट गयी। कहीं मन्ने...मुन्नी का कलेजा जैसे फटने-फटने को हो आया, क्या सच ही मन्ने...

-आओ, भाई, बैठो-एक साथी बोला-देर हो रही है।

मन्ने के अब्बा का एक्का दूर जाता हुआ दिखाई दे रहा था, और मुन्नी को लग रहा था, जैसे मन्ने ही छूटा जा रहा है।

मुन्नी कैसे फिर एक्के पर आ बैठा, उसे नहीं मालूम। वह आँखें मूँदे ख़ामोश बैठा रहा। उसका दिल जैसे कण-कण कटता जा रहा था। उसकी इस हालत पर उसके साथी हैरान थे। उन्होंने उनकी दोस्ती की बात सुनी थी, हास्टल में कुछ देखा भी था, लेकिन यह हालत होगी, उन्हें मालूम न था।

पक्की सडक़ ख़त्म होने को आयी, तो एक्का रुक गया। दोनों साथी उतर गये, तो मुन्नी सूखे गले से बोला-मुझसे पैदल नहीं चला जाएगा। क़स्बे तक एक्का ले चलें तो कैसा!

साथियों के मन की ही बात जैसे उसने कह दी हो। देर काफ़ी हो गयी थी। लेकिन उनके कुछ कहने के पहले ही एक्केवान बोला-नहीं, कच्ची सडक़ पर हम नहीं जाएँगे। यहीं से हमें लौटना है।

एक साथी बोला-भाई, चले चलो। हम तो पैदल चले भी जाएँगे, लेकिन इनकी हालत देखते हो न। चलो, क़स्बे में ही मेरा घर है, रात ठहर जाना, घोड़े को चना-भूसी भी दे देंगे और तुम्हें खाना भी मिल जायगा। ऊपर जो भाड़ा मुनासिब कहो देंगे ही।

एक्केवान के लिए यह लोभ बड़ा था। ज़रा देर ना-नुकुर करके वह बोला-छै रुपये लेंगे।

आख़िर साढ़े चार पर तै हुआ और घोड़ा आगे बढ़ा।

मुन्नी के गाँव पहुँचते-पहुँचते साँझ ढल गयी। उसके पाँव उठते ही नहीं थे। गाँव देखकर फिर उसे रोना आ गया, जैसे सब-कुछ गँवाकर वह गाँव लौट रहा हो।

...लेकिन यह क्या? पोखरे के पासवाले खण्ड के सहन में वह कौन खड़ा है? साँझ के धुँधलाये अँधेरे में भी मुन्नी की आँखे उसे पहचानने से चूकनेवाली नहीं थीं, मन्ने!

एक क्षण को उसे ऐसा लगा कि ख़ुशी के मारे उसकी जान की निकल जायगी! ...लेकिन दूसरे ही क्षण जाने उसके मन में कौन-सा कौंदा लपक उठा कि वह सीधा तनकर खड़ा हो गया और मन्ने की ओर से गुस्से के मारे आँखें फेरकर सीधे रास्ते पर तेज़-तेज़ चल पड़ा।

मन्ने ने भी उसे पहचान लिया था। उसने लपकते हुए उसे पुकारा-मुन्नी! मुन्नी!

लेकिन मुन्नी ने उसकी ओर पलटकर भी नहीं देखा, उसके क़दम और भी तेज़ होते गये।

मन्ने उसके पीछे लपकता हुआ पुकारता जा रहा था-सुनो! सुनो! क्या बात है? ...तुम इस तरह क्यों भागे जा रहे हो? ...ठहरो! ...

लेकिन मुन्नी के कान जैसे बहरे हो गये थे। वह लपककर अपने घर में घुस गया और रात-भर बाहर नहीं निकला।

आठ दिन बीत गये। मन्ने ने दिन में कई-कई बार मुन्नी के घर के फेरे लगाये, उससे मिलने की हर कोशिश की,लेकिन मुन्नी नहीं मिला, उसे जैसे मन्ने की सूरत देखना भी गवारा न हो।

स्कूल खुलने पर मन्ने की आशा के विपरीत मुन्नी न उसके साथ आया, न हास्टल में ही दिखाई दिया। मन्ने की समझ में न आ रहा था कि आख़िर क्या बात हुई कि मुन्नी उसकी सूरत से भी नाला हो गया है? किसी-न-किसी तरह वह उससे मिलकर यह पूछना चाहता था। उसकी बेचैनी की भी हद न थी। उसके घर पर वह ज़बरदस्ती उससे मिल नहीं सकता था,लेकिन उसे आशा थी कि स्कूल खुलने पर वह ऐसा कर सकेगा।

हास्टल में वह न आया, तो मन्ने ने सोचा, शायद वह अभी घर से आया ही नहीं। लेकिन कक्षा में वह दिखाई पड़ गया, तो उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। वह उससे दूर पीछे की क़तार में बैठा था, उसके सामने डेस्क पर कोई किताब भी नहीं थी। मन्ने ने सोचा,शायद अभी-अभी गाँव से आया है और सीधे स्कूल में आ गया है। उसने कई बार घूम -घूमकर उसकी ओर देखा, लेकिन मुन्नी सिर झुकाये बैठा था,उसने एक बार भी उससे आँख न मिलायी।

स्कूल में मन्ने ने कई बार उससे मिलने की कोशिश की, लेकिन मुन्नी साफ़ कन्नी काट गया।

स्कूल के बाद मन्ने को आशा थी कि मुन्नी सीधे हास्टल आएगा,लेकिन वह नहीं आया।

दूसरे दिन मालूम हुआ कि मुन्नी अपनी ओर के विद्यार्थियों के एक डेरे पर ठहरा है। अब मन्ने को विश्वास हो गया कि मामला संगीन है। मुन्नी की नाराज़गी कोई मामूली नहीं। लेकिन बार-बार सोचने पर भी उसकी समझ में यह नहीं आता था कि आखिर इसका कारण क्या है, उसकी ओर से तो जान-बूझकर कुछ ऐसा हुआ ही नहीं है। अब उससे यों रहना कठिन हो गया। उसने निश्चय किया कि जो भी हो, जैसे भी हो, आज उससे मिले बिना वह नहीं रह सकता।

स्कूल की छुट्टी हुई, तो मन्ने ने उसका पीछा किया और सडक़ पर पहुँचते-पहुँचते उसका हाथ पकड़ लिया। बोला-मुन्नी! सच बताओ...

मुन्नी ने झटककर अपना हाथ छुड़ा कोट की जेब में डाल लिया। बोला कुछ नहीं और आगे बढ़ गया।

मन्ने एक क्षण खड़ा रहकर फिर आगे लपका और उसके कोट की जेब में हाथ डाल उसका दाहिना हाथ पकड़ लिया।

मुन्नी ने ऐसे जोर का झटका दिया कि उसकी जेब चर्र-से बोल गयी।

मन्ने को काठ मार गया। नयी गरम कोट थी। वह अपराधी की तरह फटी जेब को देखता रह गया।

कुपित होकर मुन्नी फिर आगे बढ़ गया, तो लपककर मन्ने ने फिर उसका हाथ पकड़ लिया। बोला-मुन्नी! ...

-तुम्हें मेरी ही क़सम है, जो मुझे छुआ या मुझसे कोई बात की!-क्षोभ से काँपता हुआ मुन्नी बोला।

मन्ने की तो जैसे ऊपर की साँस ऊपर और नीचे की नीचे ही रह गयी। एक क्षण बाद अपने को सम्हालता हुआ, व्याकुल कण्ठ से वह बोला-मुन्नी! अपनी क़सम वापस लो! वापस लो

नहीं लेता!नहीं लेता!-सिर झकझोरकर मुन्नी बोला और आगे बढ़ गया।

मन्ने ठक खड़ा उसे जाते हुए देखता रहा। उसे ऐसा लग रहा था, जैसे उसकी जान ही निकलकर चली जा रही हो। फिर दूसरी ही क्षण ऐसा लगा, जैसे उसकी जान वापस आ गयी हो। और ग्ुस्से के मारे उसका चेहरा तमतमा उठा, उसका शरीर काँप उठा। बोला-मैंने आख़िर क्या किया है कि उसने ऐसी क़सम दिलायी?जाओ! देखूँगा,कैसे क़सम वापस नहीं लेते!

और मन्ने ने उसी शाम से खाना छोड़ दिया!

किसी को मालूम नहीं था कि मन्ने खाना खाता है या नहीं, लेकिन यह सभी को मालूम था कि वह स्कूल नहीं जाता। मुन्नी ने एक दिन देखा, दो दिन देखा तीसरे दिन हास्टल के एक साथी से पूछा-मन्ने स्कूल क्यों नहीं आता?

-पता नहीं। वह तो रात -दिन कमरे में पड़ा रहता है।

-क्यों, तबीयत तो ख़राब नहीं?

-नहीं,ऐसा -कुछ तो मालूम नहीं पड़ता।

तीन दिन और बीत गये। फिर भी मन्ने स्कूल में दिखाई नहीं दिया, तो मुन्नी बेचैन हो उठा। आख़िर उसे क्या हो गया? स्कूल वह क्यों नहीं आता? उसकी बात उसे लग तो नहीं गयी? उसे ग़ुस्से के बदले अब अफ़सोस होने लगा कि क्यों उसने उसे ऐसी बड़ी क़सम दिलायी। वह बेचैन हो उठा।

अगले दिन स्कूल पहुँचा, तो सबके मुँह पर एक ही बात...मन्ने एक हपते से फ़ाक़ा कर रहा है। कुछ नहीं खाता। आज सुबह नौकर उसके कमरे में झाड़ू देने गया , तो देखा वह बेहोश पड़ा है। हास्टल में हल्ला हो गया। लडक़े पहुँचे। मन्ने के मुँह से फेन निकल रहा था और वह बेहोश पड़ा था डाक्टर बुलवाया गया। उसने देखकर कहा, इसके पेट में तो कुछ है ही नहीं। कितने दिन से इसने खाना नहीं खाया? बावर्ची को बुलाकर पूछा गया तो उसने बताया कि वे एक हफ्ते से मेस में खाना नहीं खाते। मना कर दिया था। डाक्टर सोडा मँगाकर, ज़बरदस्ती उसका मुँह खोलकर डालने लगे, तो वह उठ बैठा और मना करने लगा। ...पता नहीं उसे क्या हो गया है। वार्डन और डाक्टर अभी उसके पास बैठे हैं। लडक़ों को उन्होंने भगा दिया।

मुन्नी ने सुना तो उसे सनाका हो गया। वह सीधे भागकर मन्ने के पास जा पहुँचा। उस हालत में देखकर उसका दिल धड़-धड़ बजने लगा। वह पुकार उठा-मन्ने! मन्ने! सोडा पी लो!

मन्ने ने आँखें खोलीं। उसकी वह आँखें देखकर मुन्नी का कलेजा मुँह को आ गया। वह जोर से चीख़ पड़ा-मन्ने! सोडा पी लो!

डाक्टर हैरान, वार्डन हैरान! वार्डन ने मुन्नी को रोकना चाहा, तो डाक्टर ने संकेत से उन्हें ही रोक दिया।

मन्ने ने इधर-उधर देखने का प्रयत्न किया। फिर मुन्नी को पहचानकर बोला-अपनी क़सम वापस लो! वापस लो!

-ले ली! ...ले ली!-मुन्नी ने तुरन्त कहा और डाक्टर साहब के हाथ से गिलास लेकर मन्ने के मुँह से लगा दिया।

मन्ने धीरे-धीरे सोडा पीने लगा। ...डाक्टर उन्हें छोडक़र वार्डन को अपने साथ लेकर चले गये।

मन्ने ने कमजोर आवाज़ में कहा-तो बताओ...

यह घटना याद करके मन्ने के होठों पर एक मुस्कान थिरक गयी। कभी वह भी कुछ था। उसके पास भी एक दिल था, जो तड़पाना जानता था तो तड़पना भी। लेकिन आज...आज कैलसिया भी उस दिन के मुन्नी की तरह ही रूठकर, ग़ुस्सा होकर चली गयी है। उसने मुन्नी को उस समय बुला लिया था, लेकिन अब क्या कैलसिया को वह बुला सकता है? नहीं, हर्गिज़ नहीं! अब वह बात कहाँ रही, वह मन की निर्मलता, हृदय की पवित्रता, प्रेम की अन्धता, त्याग की शक्ति कहाँ रही? आह, उसने उस दिल को आज क्या बना लिया है! मोम पत्थर कैसे हो गया? अरे कमबख्त!

दिल की धडक़न दे न सुनाई

इतना कान में तेल न डाल

बुख़ार गया, तो अपने से कहीं भयंकर रोग मन्ने को दे गया। उसका मेदा ख़राब रहने लगा और नींद सपना हो गयी। हवा भरकर पेट फूल जाता और लगता कि दिल बैठा जा रहा है और दिमाग़ डूबा जा रहा है। बड़ी बेचैनी होती और ऐसा लगता कि जान अब-तब हो रही है। नींद एक पल को न आती, न रात, न दिन।

फिर भी मन्ने होटल में खाना खाता, युनिवर्सिटी जाता, ट्यूशनों पर जाता और पुस्तकालय जाता। एक हफ्ते तक यही हालत रही और कोई फ़र्क नहीं आया, तो आख़िर वह अपने हकीम साहब के यहाँ गया। उसकी हालत सुनते ही उन्होंने उसे बहुत फटकारा कि उसने डाक्टरी दवा क्यों की, यह-सब उसी की करामात है। ये डाक्टर एक ज़हर को मारने के लिए दूसरा ज़हर देते है एक ज़हर का असर जाता है, तो दूसरे का शुरू हो जाता है, फिर उसे मारने के लिए वे तीसरा ज़हर देते है। और फिर इन ज़हरों का सिलसिला कहीं ख़त्म नहीं होता, रोगी भले ही ख़त्म हो जाय। यह जो तुम्हारी हालत है, सब कुनैन की कारस्तानी है, तुम्हारे जिगर का फ़ेल खराब हो गया है, दिमाग़ ख़ुश्क हो गया है।

मन्ने का रोग से यह पहला पाला पड़ा था। उसे किसी बात का ज्ञान न था। उसने हकीम साहब की हर बात सच मान ली और उनसे माफ़ी माँगी और कहा-हकीम साहब, आपसे मैं क्या अर्ज़ करूँ, मेरी हालत तो आप जानते ही हैं। दवा-दारू पर कुछ ख़र्च कर सकूँ, इसके क़ाबिल मैं नहीं। जगह-ज़मीन से जो आमदनी होती है, वह तो घर के ख़र्चे के लिए भी काफ़ी नहीं पड़ती। फिर भी उसी में से काट-छाँटकर और यहाँ ट्यूशनें करके किसी तरह रहने-सहने और पढ़ाई का ख़र्चा निकालता हूँ। यहाँ यह सोचकर आया था कि दो साल की बात है, किसी तरह एम.ए. कर लूँगा, तो किसी काम का हो जाऊँगा। लेकिन यहाँ तो सिर मुँड़ाते ही ओले पड़े और यह बला मेरे पीछे पड़ गयी। अब आप ही मदद करें तो इससे मेरा पीछा छूटे। और कुछ हो या न हो, कम-से-कम नींद तो मुझे आने लगे।

मन्ने का शरीर सूख गया था। चेहरे की ज़िल्द मुर्झा-सी गयी थी। आँखे स्याह हलकों में डूब गयी थीं और उनके कोनों में झुर्रियाँ उभर आयी थीं। उसकी परेशान, सफ़ेद-सफ़ेद आँखों को देखकर लगता था कि उसके पागल होने में ज्यादा देर नहीं।

हकीम साहब को उसे देखकर बड़ा तरस आया। उन्होंने कहा-तुम कुछ दिनों के लिए गाँव क्यों नहीं चले जाते? वहाँ घी-दूध और ताज़ी सब्ज़ियाँ मिलेंगी और सबके ऊपर खुली, साफ़ हवा मिलेगी...

बीच में ही उनकी बात काटकर गिड़गिड़ाकर मन्ने बोला-नहीं, हकीम साहब, आप ऐसी राय मत दीजिए। बिना सालाना इम्तिहान दिये मैं यहाँ से कहीं नहीं जा सकता। आप मेहरबानी करके मुझे कोई ऐसी दवा दीजिए कि मुझे नींद आने लगे।

एक हफ्ते तक लगातार नींद न आने का मतलब हकीम साहब जानते थे, इसलिए आगे कोई बात न करके उन्होंने 'हमदर्द' की एक शीशी देकर कहा-दो-दो घण्टे में एक-एक गोली मलाई में लपेटकर खाना, इसकी क़ीमत सात रुपये है।

सुनकर मन्ने की बाई सरक गयी। उसके चेहरे का भाव देखकर हकीम साहब ने कहा-यह पेटेण्ट दवाई है, मैंने खरीदकर ही रखी है। जितने में मुझे मिली है, उतना ही तुमसे माँग रहा हूँ। और हाँ, सिर पर कद्दू के तेल की मालिश भी ज़रूरी है। इससे दिमाग़ को तरी मिलेगी और नींद आ जायगी। तेल बीस रुपये सेर है, चाहे मेरे यहाँ से ले लो या और कहीं से।

मन्ने सिर झुकाकर इस तरह सोचने लगा, जैसे हकीम साहब की दवा की क़ीमत नींद न आने से अधिक परेशान करनेवाली हो। और थोड़ी देर बाद वह शीशी वहीं रखकर उठ खड़ा हुआ तो हकीम साहब बोले-क्या बात है?

मन्ने ने सिर झुकाये ही कहा-इतना पैसा मेरे पास इस वक़्त कहाँ है, हकीम साहब?

-तो दवा तो ले जाओ, पैसे फिर दे देना। तुम्हारे यहाँ से पैसे कहाँ जाते हैं?-हकीम साहब ने अपनापा जताते हुए कहा-तुम तो अपनी तरफ़ के मातबर आदमी हो।

-नहीं, हकीम साहब, उधार लेने की मेरी आदत नहीं। फिर आपके तो पहले ही बड़े एहसान हैं। आपने मुझे ट्यूशनें दिलवायीं। ...

-तो क्या हुआ? वक़्त पर अपने ही आदमी तो काम आते हैं!-हकीम साहब ने जोर देकर कहा-तुम दवा ले जाओ!

-नहीं, मैं पैसे लेकर शाम को आऊँगा।-और मन्ने चल पड़ा।

-मौलाना के घर से डाकख़ाने की पासबुक लेकर चला तो वह रूपयों का हिसाब लगाने लगा। साल -भर का ख़र्च सात सौ रूपये लेकर चला था और इस समय दो सौ के क़रीब बच गये थे और अभी छः-सात महीने का ख़र्चा चलाना था, कुछ ज़रूरी किताबें भी ख़रीदनी थीं। दवा -दारू का सवाल न उठता, तो ट्यूशनों के सहारे इतने में भी मज़े में वह काट लेता। और अब सिर्फ़ दवा-दारू का ही सवाल नहीं था, वह इसी तरह बीमार रहा तो ट्यूशनें छूटने का भी ख़तरा था उसने यह -सब सोचा,तो लगा कि वह एक ऐसे चक्कर में फँस गया है, जिससे निकलना नामुमकिन है, यह पैसे का चक्कर उसे कहीं निगल ही न जाय! दवा- दारू के लिए भी कभी पैसे ख़र्च ने पड़ेंगे, यह उसने कब सोचा था यह शरीर, चिन्ता उसने कभी भी नहीं की, जिसपर हमेशा कम-से-कम ख़र्च किया,

वही कभी इस तरह पैसा खाने लगेगा, इसका ख़याल उसे कब हुआ था? इस शरीर को पीसकर पैसा पैदा करना और बचाना ही जाना था।

शाम को उसने हकीम के यहाँ न जाकर मौलाना को सब-कुछ कह सुनाया तो वे बोले-तुम जानते हो, मेरे सात लडक़े...

-नहीं, मौलाना, मेरा यह मतलब नहीं था!-मन्ने ने उनकी बात समझकर तुरन्त कहा-मैं तो यह जानना चाहता था कि क्या किसी अस्पताल से मुझे दवा नहीं मिल सकती?

-मिल क्यों नहीं सकती?-मौलाना ने कहा-यहाँ कितने ही सरकारी अस्पताल हैं, कितने ही दीगर सोसाइटियों के अस्पताल हैं, ख़ुद युनिवर्सिटी का भी अस्पताल है, लेकिन इन अस्पतालों की दवाओं पर भरोसा नहीं किया जा सकता। फिर यहाँ से सबसे क़रीब का अस्पताल भी इतनी दूर है कि वहाँ जाने-आने में जितना ख़र्च होगा, उससे शायद कम क़ीमत में ही किसी पास के डाक्टर से दवा मिल सकती है। अस्पताल में वक़्त की बरबादी भी बहुत होती है।

-युनिवर्सटी के अस्पताल...

-ज़ाती तौर पर मैं तो राय नहीं दूँगा,-मौलाना ने कहा-क्योंकि वहाँ फर्ज़-अदायगी ज़्यादा की जाती है और एलाज कम। फिर वह सुबह आठ से नौ तक खुलता है। तुम जा सको ,तो कोशिश करके देखो, लेकिन मैं तो यही राय दूँगा कि तुम अपना एलाज हमारे ही डाक्टर से कराओ। उसी ने तुम्हारा एलाज किया है, वह जानता होगा कि मलेरिया छूटने के बाद ये नयी बातें क्यों पैदा हुईं और उन्हें कैसे दूर किया जा सकता है। तुम्हारा कुछ ख़र्च ज़रूर होगा, लेकिन मेरा तो यह क़ौल है कि एलाज हमेशा ही, जहाँ तक मुमकिन हो, बेहतरीन कराना चाहिए। तुम चाहो तो मैं भी तुम्हारे साथ चल सकता हूँ।

एक रात और अनिद्रा और चिन्ता में काटकर दूसरे दिन शाम को मन्ने मौलाना के साथ डाक्टर के यहाँ गया,तो उसकी शिकायत सुनकर डाक्टर ने पूछा-तुम क्या खाता है?

मन्ने ने बताया-इधर दो -तीन दिन से तो कुछ खाया ही नहीं जाता। पहले होटल...

होटल का नाम सुनते ही डाक्टर बिगड़ उठा-तुमसे किसने कहा था होटल में खाने को? मक्खन, दलिया, हरी सब्ज़ी तुम्हें लेना चाहिए था...

-मेरा मेदा...

-वो तो होगा ही, बाबा! तुम्हारी एक हफ्ते से यह हालत है, तुम पहले क्यों नहीं आया?

-मैं तो सोचता वा...

-कि होटल का दाल-भात खाकर ठीक हो जायगा। तुम सातूखोर लोग सिर्फ़ पैसा बचाना जानता है।

डाक्टर ने नुस्ख़ा लिखा और पिचकारी में दवा भरकर मन्ने के बाजू में सूई घोंप दी। बोला-ये तीन दवाएँ वहाँ से ले लो। मिक्स्चर दो-दो घण्टे में पीना, दिनभर में छै ख़ूराक पी जाना। दो तरह की गोलियाँ हैं। एक खाने के बाद और दूसरी सोने के पहले लेना। दलिया में आधी छटाँक मक्खन लगाकर खाना और थोड़ा-थोड़ा करके दिन-भर में एक सेर दूध पीना। बारह सूइयाँ लगेंगी और दवाइयाँ भी बारह दिन चलेंगी। पूरा आराम करो। कोई काम मत करो।

सात रुपये देकर मन्ने चला तो वह बारह दिन का हिसाब ही लगा रहा था। उसकी बधिया अब बैठकर ही रहेगी, इसमें उसे कोई सन्देह नहीं रह गया।

रिक्शे से उतरते हुए मौलाना ने कहा-दलिया मैं अपने यहाँ बनवाये देता हूँ। मक्खन-दूध...क्यों, मन्ने? वह उस दिन जो औरत तुमसे मिलने आयी थी, तुम कहते थे, वह दूध की तिजारत करती है, क्या उसके यहाँ से तुम दूध-मक्खन का इन्तज़ाम नहीं करवा सकते? भाई, यहाँ खालिस दूध-मक्खन मिलना नामुमकिन है...

मन्ने ने योंही जवाब देने के लिए कह दिया-मालूम करूँगा।

कमरे में बिस्तर पर वह जा पड़ा, तो सच ही कैलसिया की याद उसके दिमाग़ में ऐसे रेंग आयी, जैसे सुबह की कोई किरण खिडक़ी से कमरे में आ जाय। उसे मौलाना की बात देवदूत के सन्देश की तरह लगी। उसे अफ़सोस हुआ कि उसने क्यों कैलसिया को उस तरह नाराज़ करके वापस लौटा दिया। उस वक़्त वह अगर उसके साथ चला जाता, तो कितना अच्छा होता! उसके यहाँ दूध-मक्खन की क्या कमी होगी। कदाचित् वहाँ रहकर उसकी यह हालत न होती। फिर यह भी मुमकिन था कि वहाँ रहकर उसका कोई ख़र्च...मन्ने का दिमाग यहाँ आकर सहसा ठिठक गया। ओह, वह कितना नीच और स्वार्थी हो गया! ...वह कैलसिया के साथ इसलिए नहीं गया कि कहीं मौलाना बुरा न मान जायँ और आज वह कैलसिया के यहाँ इसलिए जाना चाहता है कि...नहीं-नहीं, यह बात ज़बान पर लाना भी कमीनगी है! ...यह क्या हो गया है मन्ने को? ...हकीम के

सामने कैसे वह अपना दुखड़ा रोया? ...मौलाना से उसने कैसे अपनी हालत बयान की? और अब कैलसिया को क्यों याद कर रहा है? इस-सबसे आख़िर उसकी मंशा क्या है? मदद की माँग, भीख? ...मन्ने, क्या तुम सच ही इतने गिर गये हो? तुम्हारे स्वाभिमान को क्या हुआ? आत्मसम्मान को क्या हुआ? उस सिर को क्या हुआ, जिससे दीवार तोड़ने का हौसला तुम अपने में पाले हुए थे? बोलो! बोलो! ...रुपया! रुपया! रुपया! इस रुपये के लिए तुमने क्या-क्या नहीं किया? याद तो करो! ...और अब, अब तुम क्या कर रहे हो? इसके आगे तुम क्या रह जाओगे? इससे बेहतर तो यही है कि तुम मर जाओ, मर जाओ! इतनी जायदाद पास में रहते हुए जो शख़्स इस तरह की हरकत करे, तुफ़ है उस पर! आख़िर वह कब किस काम आयेगी? एलाज से बढक़र भी क्या कोई ज़रूरत होती है?

-अरे भाई मन्ने,-अचानक कमरे में दाख़िल होते हुए मौलाना बोले-देखो, यह बड़ी देर से आकर घर में बैठी थी। यह तुम्हें ले जाना चाहती है तो तुम क्यों नहीं जाते? कहती है...

-हाँ, हजूर,-कैलसिया सामने आकर हाथों की अँगुलियाँ उलझाती हुई बोली-ये हमारे सरकार हैं, मालिक हैं। इस हालत में भी हम इनकी कोई सेवा न कर सकें तो नरक में भी हमें जगह नहीं मिलेगी। देखिए न, इनकी का हालत हो गयी है! ...

मन्ने ने हक्का-बक्का होकर एक क्षण के लिए कैलसिया को देखा और आँखें नीची कर लीं उसे कब यह आशा थी कि उस तरह बिगडक़र गयी कैलसिया फिर उसका मुँह देखने आयगी?

-क्या कहते हो?-मौलाना ने कहा-भई, मेरे देखने में तो यही बेहतर है कि तुम इसके साथ चले जाओ। हमारे यहाँ तुम्हारी तीमारदारी जिस तरह हो सकती है, तुम्हें मालूम ही है। क्या करें, इतने मजबूर हैं कि बस हाथ मलने के सिवा कोई चारा नहीं। तुम चले जाओ, मन्ने! कोई और ख़याल न करो, मैं ख़ुशी से यह बात कह रहा हूँ!

-हाँ, बाबू आप चलिये हमारे साथ!-कैलसिया गिड़गिड़ाकर बोली-इतना हमको मत सताइए! मियाँ कई बार सपने में हमें डाँट चुके हैं कि तू किसकी बात पर रूठी हुई है? जाकर उसे ले आ! ...आज दरगाही से जो-कुछ आपके बारे में सुना है, उससे आप नहीं जान सकते कि हमारी का हालत हो रही है! आप चलिए, बाबू!-फिर वह मौलाना की ओर मुडक़र बोली-मेहरबानी करके एक टेक्सी मँगवा दीजिए! बाबू जाएँगे।

आँखें उठाकर मन्ने उस वक़्त देखता तो कैलसिया की आँखों में छलछला आये आँसुओं को सम्हालना उसके लिए कठिन हो जाता। इस समय मन्ने की हालत वही हो रही थी, जो उस नाव की होती है, जिसका मल्लाह धारा के विरुद्घ लग्गी मारते-मारते थककर हार मान गया हो और आख़िर विवश हो उसे धारा के हवाले कर दिया हो।

टैक्सी आ गयी तो कैलसिया ने मन्ने के सिर के नीचे अपना हाथ लगाया। लेकिन उसे उठाने की ज़रूरत नहीं पड़ी। मन्ने ख़ुद उठकर एक झोंके की तरह कमरे से बाहर निकलकर टैक्सी में जा बैठा। कैलसिया ने उसका सूटकेस और बिस्तर टैक्सी में रखा और मौलाना को सलाम किया।

मन्ने को शायद इतना भी होश न था कि वह मौलाना को सलाम करता। मौलाना ने ख़ुद ही कहा-मन्ने, तुम अच्छे होकर ही युनिवर्सिटी आना। कोई फ़िक्र न करना, तुम्हारी हाज़िरी मैं कम नहीं होने दूँगा।

मन्ने पलकें झुकाये टैक्सी में बैठा था और उसका मन जैसे एक बवण्डर में फँसा हुआ था। लग रहा था, यह बवण्डर उसे उड़ा ले जाकर किसी चट्टान पर पटक देगा और उसकी हड्डी-पसली चूर-चूर हो जायगी। इससे बचने का कोई उपाय नहीं!

कैलसिया उसकी बग़ल में चुपचाप बैठी थी। रह-रहकर वह मन्ने को कनखियों से देख लेती थी। उसकी आँखों की ख़ुशी छुपाये न छुपती थी। उसके मन में बस एक ही बात थी कि कैसे जल्दी-से-जल्दी वे बासे पर पहुँच जायँ।

टैक्सी जहाँ जाकर रुकी, मन्ने को एक ही चीज़ का एहसास हुआ, वह थी गोबर की तीव्र गन्ध। इस गन्ध ने कमरे तक उसका पीछा न छोड़ा। कमरे में एक बिस्तर पहले ही से लगा हुआ था। कैलसिया ने उसे बिस्तर पर बैठाकर कहा-हम अभी चाय बनाकर लाते हैं।-और वह अल्हड़ की तरह कमरे से भाग खड़ी हुई।

मन्ने चाय नहीं पीता। चाय पीने से उसे ख़ुश्की हो जाती है। अनिद्रा के रोग में चाय और भी नुक़सान पहुँचा सकती है। फिर भी मन्ने ने कैलसिया को नहीं रोका। वह इस समय कुछ भी बोलने की मन:स्थिति में नहीं था। वह सिर्फ़ चुपचाप लेट जाना चाहता था। उसने तकिया ठीक करना चाहा, तो उस पर लाल डोरे से बने घोड़ों और हाथियों की कतारों को देखकर वह बिदक-सा गया। इस ख़याल से ही वह परेशान हो उठा कि इस तकिये पर उसे सिर रखना पड़ेगा। उसे योंही नींद नहीं आती, फिर यह एहसास कि उसके सिर के नीचे हाथी और घोड़े दौड़ लगा रहे हैं और क़यामत बरपा कर देगा। उसे

अपने तकिये की याद आयी, जिस पर महशर के हाथ का काढ़ा हुआ ग़िलाफ़ है, जिस पर बेले के एक हार के बीच यह शेर काढ़ा हुआ है:

सबा आहिस्ता चल नाज़ुक-तबा बेदार होता है

मनाकर गुल की कलियों को न चिटखें यार सोता है

तभी उसके कानों में एक आवाज़ आयी-सलाम।

यह स्वर कुछ ऐसा रूखा और रस्मी था कि मन्ने ने अचकचाकर सिर उठाया। देखा तो एक पहलवान-सा आदमी लुंगी और ढीला-ढाला पंजाबी कुर्ता पहने उसके सामने से होकर, बिना उसकी ओर देखे हुए एक हाथ में उसका सूटकेस और दूसरे में बिस्तर लटकाये कमरे के एक कोने की ओर बढ़ा जा रहा था, उसके कानों की लोरकियाँ ऐसे हिल रही थीं, जैसे वह मन-ही-मन कुछ भुनभुनाता हुआ धीरे-धीरे सिर हिला रहा हो। मन्ने उसकी ओर देखता रहा। वह आदमी सूटकेस और बिस्तर कोने में पटककर आले की ओर फुर्ती से बढ़ा, जिसपर लालटेन जल रही थी। उसने चट लालटेन की बत्ती नीचे कर दी और उसकी कुड़बुड़ाहट सुनाई दी-किसने बत्ती इतनी तेज़ कर दी?

वह पलटा तो उसकी घूरती हुई नज़र मन्ने की आँखों से ऐसे टकरायी कि मन्ने की गर्दन एकदम मुड़ गयी। वह आदमी तेज़ कद़मों से चलकर कमरे के बाहर हो गया।

उस समय मन्ने के मन में बस एक ही ख़याल बिजली की तरह कौंधा कि अगर यही आदमी कैलसिया का मर्द है, तो उसका यहाँ आना बिलकुल ठीक नहीं हुआ। एक आशंका से वह भर उठा।

आँचल से एक बड़ा-सा फूल का गिलास पकड़े हुए कैलसिया अन्दर आयी।
बोली-लीजिए।

मन्ने ने एक सहमे हुए आज्ञाकारी बालक की तरह हाथ बढ़ाया तो हँसकर कैलसिया बोली-गिलास गरम है, ऐसे कैसे पकड़ेंगे?

मन्ने की जेब में रूमाल था, लेकिन इस स्थिति में उसे उसका ख़्याल ही नहीं आया। वह हाथ खींचकर सोचने लगा कि क्या करे कि कैलसिया खड़े-खड़े उसके मुँह के पास झुककर बोली-लीजिए, हमारे ही हाथ से पी लीजिए, बाबू!-और उसने सच ही गिलास, वैसे ही आँचल से पकड़े हुए, उसके होठों से लगा दिया।

मन्ने को यह उम्मीद बिलकुल न थी, अचके में उसका होंठ जैसे छन से जल गया, फिर भी उसने मुँह न खींचा, जैसे खींच ही न पाया हो, और घूँट वैसे ही भर लिया, जैसे अनजाने मुँह में कोई गर्म चीज़ डाल लेने पर आदमी उसे थूकने के बदले चट निगल जाता है और मुँह के साथ ही गला भी जला लेता है।

यह चाय थी या मलाई, मन्ने को किसी स्वाद का ज्ञान न हुआ। हाँ, उसकी एक नज़र दरवाज़े की ओर ज़रूर थी! कैलसिया उसी तरह घूँट-घूँट देती रही और मन्ने उसी तरह बिना किसी स्वाद का अनुभव किये निगलता रहा। उसका दिल धक-धक करता रहा और वह डरता रहा कि कहीं उसके दिल की आवाज़ किसी को सुनाई तो नहीं दे रही।

गिलास खाली हो गया तो व्याकुल होकर कैलसिया बोली-अरे, मिठाई लाना तो हम भूल ही गये। कैसे बिसभोर हैं हम! लाएँ अब, बाबू?

मन्ने को ऐसा लग रहा था, जैसे पेट में कोई भारी चीज पहुँच गयी हो। अब मुँह में मलाई का स्वाद भी कुछ-कुछ उभर रहा था। उसने तय किया था कि वह यहाँ अपने मुँह से कुछ भी नहीं कहेगा। पूरी तरह अपने को कैलसिया पर छोड़ देगा, जो चाहे वह करे। लेकिन इस समय उसे लगा कि नहीं, वह ना तो कर ही सकता है। उसने आँखें उठाकर कैलसिया के मुँह की ओर देखा। कैलसिया का चेहरा सुबह के सूरजमुखी फूल की तरह खिला हुआ था और आँखों से उल्लास छलका पड़ता था। और मन्ने के मन में आया कि वह हाँ कर दे, लेकिन उसका सिर ना में हिल गया।

अचानक अब जाकर कैलसिया को ध्यान आया कि रोशनी कम है। वह लपककर आले के पास गयी और लालटेन की बत्ती उकसाती हुई कुड़बुड़ायी-यह बत्ती किसने इतनी धीमी कर दी!

लौटकर बोली-बाबू! थोड़ा-सा भी खा लीजिए! मँगाकर रखी है, आप न खाएँगे तो हमारा मन कुहुरेगा!-और वह लपककर दरवाज़े की ओर चल पड़ी। मन्ने उसकी ओर देखता रहा और जब वह बाहर चली गयी, तो अचानक ही मन्ने को ऐसा लगा कि वह रो देगा। अन्दर से इस तरह रुलाई उठी कि एक क्षण को तो वह अनबुझ-सा यही नहीं सोच पाया कि उसका मन यों रोने को क्यों आतुर हो उठा, लेकिन दूसरे ही क्षण बाहर से किसी बछड़े की बें की आवाज़ आयी, तो उसके मन में जैसे सहसा ही एक प्रकाश भर गया और फिर तो रुलाई ज्वार की तरह फफक पड़ी। नज़दीक था कि किनारे डूब जाते, लेकिन तभी एक कोड़ा जैसे सटाक से पीठ पर पड़ा, बाहर से शायद उसी आदमी की आवाज़ सुनाई दी-यह गिलास अलग ही रखना!

और कैलसिया की आवाज़ थी-तेरे लिए बर्तन अलग रख देंगे, तू चिन्ता मत कर!

भाटे की तरह सिकुडक़र मन्ने रह गया। थोड़ी देर तक तो जैसे वह कुछ सोचने में भी असमर्थ रहा, फिर उसे लगा कि वह ऐसा ही बना रहे तो अच्छा और जितनी जल्दी हो सके, यह जगह छोड़ दे, यहाँ रहना नहीं हो सकता!

वह आदमी फनफनाता हुआ अन्दर आया और एक कोने में टँगी हुई अलगनी से लटकते एक लँगोटे को खींचकर बाहर जाने को मुड़ा ही था कि पलटकर आले के पास पहुँचा और लालटेन की बत्ती चट से नीची करते हुए कुड़बुड़ाया-यह बत्ती किसने इतनी तेज़ कर दी!-और तेज़ी से कमरे से बाहर हो गया।

मन्ने के मन में आया कि वह उठकर लालटेन बुझा दे और अँधेर में खो जाय, न इस आदमी को वह दिखाई दे, न कैलसिया को। यह तो अजीब गोरखधन्धे में वह फँस गया, जैसे एक आदमी उसका एक हाथ पकडक़र अन्दर खींच रहा हो और दूसरा उसका दूसरा हाथ पकडक़र बाहर।

कैलसिया छिपुली में मिठाइयाँ लेकर आयी, तो मन्ने से ज़ब्त न किया जा सका। वह बोला-मैं नहीं खाऊँगा।

-काहे?-जैसे आसमान से गिरकर कैलसिया बोली। फिर कोई जवाब न पाकर वह गिड़गिड़ा उठी-कम-से-कम एक तो खा लीजिए, बाबू, कितनी साध से लाये हैं।-और उसने अपने हाथ से एक रसगुल्ला उठाकर उसके मुँह की ओर बढ़ा दिया।

मन्ने के जी में आया कि कहे कि वह यह क्या कर रही है, लेकिन उसकी ओर देखते ही जैसे उसका मुँह आप ही खुल गया और कैलसिया ने पूरा रसगुल्ला उसके मुँह में डाल दिया।

कैलसिया उसे खाते हुए देखकर हँस पड़ी। जब वह खा चुका तो बोली-एक और दें?

-नहीं, मेरा पेट खराब है।-दरवाज़े की ओर देखते हुए मन्ने ने हकलाकर कहा।

-हाँ, बाबू!-छिपुली एक ओर रख, ज़मीन पर बैठती हुई कैलसिया आकुल होकर बोली-दरगाही कहता था, आपका पेट खराब रहता है और आपको कई रातों से नींद नहीं आयी। मुए होटलवालों के यहाँ ऐसा खाना ही मिलता है कि अच्छा-भला आदमी भी बीमार पड़ जाय। जरा अपनी सूरत तो देखिए, इतना-सा मुँह निकल आया है! ...अरे! यह बत्ती फिर किसने कम कर दी!- और लपककर कैलसिया आले के पास जा,

लालटेन उठा, हिलाकर देखने लगी कि कहीं तेल तो कम नहीं? फिर बोली-तेल तो भरा है!-और लालटेन रखकर, बत्ती उकसाकर वह फिर मन्ने के पास धरती पर आ बैठी। बोली-अब हम आपको का कहें? यहाँ अपना घर रहते हुए भी आप दूसरी जगह जा ठहरे और खाने-पीने की इतनी तकलीफ उठायी और अपनी यह हालत कर ली। मियाँ होते तो वो हमारे यहाँ रहते, और कहीं नहीं ठहरते!

मन्ने आँखें झुकाये बैठा रहा। कुछ भी नहीं बोला।

कैलसिया ही बोली-दरगाही से आपका हाल सुना, तो रहा नहीं गया। उस दिन तो सोचकर आये थे कि फिर कभी आपके पास न जाएँगे। लेकिन मन के आगे किसका हठ चला है! आज भी कहीं आप नहीं आते,-कैसलिया बात अधूरी छोडक़र, ठुड्डी ठेहुनों पर रखकर दाहिने हाथ की बिचली अँगुली के नाख़ून से धरती पर चिचिरी खींचने लगी। और रह-रहकर ठण्डी, लम्बी साँस उसके मुँह से निकल जाती।

मन्ने वैसे ही खामोश बैठा रहा।

कैलसिया ने आँखें उठाकर कहा-आप कुछ बोलते काहे नहीं? का सोच रहे हैं?

मन्ने क्या बोले? मन्ने ने अपने मन के ख़िलाफ अब तक जो भी किया था, एक झोंक में किया था और हमेशा ही नयी परिस्थिति से समझौता कर, बिना किसी पश्चाताप के आगे बढऩे की कोशिश की थी। लेकिन इस बार वह समझौता नहीं कर पा रहा, उसे लग रहा था कि यह ठीक नहीं हो रहा। उसका यहाँ आना उसके लिए भले ज़रूरी हो, लेकिन यही बात कैलसिया के लिए दुखदायी सिद्घ हो सकती है। उस आदमी के रुख़ से यह बात तै हो गयी थी कि उसका यहाँ आना आपद्जनक है। ऐसी स्थिति में उसका यहाँ रहना कमीनगी की हद ही होगी। मन्ने अभी इतना अन्धा नहीं हुआ है कि स्वार्थवश वह इस हद तक जा सके और कैलसिया के जीवन में विष बो दे।

बोला-वह आदमी कौन है?

-कौन आदमी?-अचकचाकर कैलसिया बोली।

-वही, जो तुमसे गिलास के बारे में कह रहा था?-मन्ने ने यह सोचकर कहा कि वह इस तरह बात शुरू कर कैलसिया को समझा देगा और कल सुबह ही वह यहाँ से चल देगा।

सुनकर कैलसिया ठठाकर हँस पड़ी। बोली-उसकी बात पर न जाना, बाबू। वह मुँह का जरा कड़ा है, लेकिन मन से इतना मधुर, जैसे ऊख! नहीं तो का हम इसके साथ बैठ

जाते? ...इसने हमारी जान बचायी थी, बाबू! ...और अब हमारी एक-एक बात को जान के पीछे रखता है! ...आप नहीं आये तो हमें गुस्सा कम और दुख जियादा हुआ था। रात-दिन हम आप ही के बारे में सोचते रहते थे। नींद में आपके सपने देखते थे। मियाँ का सपना तो हमें अक्सर ही आता रहता है। हम बहुत परेशान रहते थे, बाबू! एक दिन इसने पूछा तो हमने सब बता दिया। तब वह बोला, जाकर काहे नाहीं लाती? हम बोले, वो नहीं आते। वह बोला, अरे, का कहती है, कह तो हम उन्हें अपनी गोद में उठा लाएँ। कौन होते हैं वो न आने वाले?

कहकर कैलसिया मधुर हँसी-हँस पड़ी। बोली-यह बिस्तर उसी ने आपके लिए लगा रखा था। कमरा भी साफ किया है लालटेन भी। जाते बखत बोला था, बिस्तर हम लगा रखेंगे, लेकर नहीं आयी, तो ठीक नहीं होगा!-और वह फिर वही हँसी हँस पड़ी।

मन्ने सोच में पड़ गया, अगर ऐसी बात है, तो वह इतना उखड़ा-उखड़ा क्यों लगता है, इस तरह घूर-घूरकर उसकी ओर क्यों देखता है, इस तरह लालटेन क्यों कम कर देता है, जैसे उसके लिए ज़रा तेल जलना भी उसे गवारा न हो? ...अजीब बात है!

बोला-मेरे देखने में तो वह बहुत नाराज़ मालूम होता है।

-नहीं, ऐसा कैसे हो सकता है?-सिर हिलाकर कैलसिया बोली-काहे आप ऐसा सोचते हैं? का कुछ...

-हाँ, कुछ देखा है, तभी तो कहता हूँ!-मन्ने अपनी बात पर आ बोला-तू नाहक़ मुझे यहाँ ले आयी...

-ऐसी बात मुँह से मत निकालिए, बाबू!-व्याकुल होकर कैलसिया बोली-अगर उसे नाराज समझकर ऐसी बात आपके मन में उठी है, तो उससे सीधे पूछ लीजिए। उसकी नाराजगी को हमसे जियादा कोई का समझेगा? वो हम पर भी कभी-कभी नाराज हो जाता है। पहली दफे जब वह नाराज हुआ, तो उसका सुभाव न जानने से हम बहुत परेशान हुए। लेकिन जब हमने उसकी नाराजगी का सबब पूछा, तो उसने जो बताया, उससे हम हँसते-हँसते लोट-पोट हो गये। और फिर उस पर इतना पियार आया कि हम आपसे का बतावें! अब जब भी वह नाराज होता है, हमारी हँसी छूट जाती है। उसका सुभाव अभी आपको नहीं मालूम, इसीलिए आपको उसकी नाराजगी बुरी लगती है। हमारी कसम! जरा उससे पूछिए न कि वो काहे नाराज है? बुलाएँ उसको?

-नहीं-नहीं!-मन्ने घबराकर बोला।

-इसमें घबराने की का बात है? आप हमारे ही सामने पूछिए। आपको उसकी बात सुनकर जितनी हँसी नहीं आएगी, उससे जियादा पियार आएगा। ऐसा जीव है वह कि आपको का बताएँ!-और उसने सच ही लपककर दरवाज़े पर जाकर पुकारा-आ-रे, सुनते हो जी?

दूर से दहाड़ती हुई-सी आवाज़ आयी-का है?

-जरा आओ तो इधर!

अभी आते हैं, बैठकी तो पूरी कर लें!

लौटकर कैलसिया बोली-मेहनत कर रहा है। अभी आये तो उससे आप सीधे पूछें।

-नहीं, मुझसे यह नहीं होगा!-परेशान होकर मन्ने बोला-मुझे तुम संकट में मत डालो। कल मैं चला जाऊँगा।

-फिर आपने वही बात कही?-कैलसिया ज़रा तेज़ होकर बोली-आप यहाँ से अब नहीं जा सकते! आपको हमारी बात पर बिसवास नहीं है, तो अभी हो जायगा। वो आता है न...हमने मियाँ के बारे में उससे सब बताया है। वो भी आपको देखने के लिए बियाकुल था। दो दिन में आप उसे समझ जाएँगे, ऐसा सीधा-सपाट आदमी है वो। भला वो आपको अब यहाँ से जाने देगा?

मन्ने की समझ में ये बातें नहीं आ रही थीं। पढ़ा-लिखा आदमी है वह, समझदार भी कम नहीं। कैलसिया जो कह रही थी, वह अक्ल में घुसने लायक बात ही न थी। आदमी की एक हरकत से समझदार आदमी के सामने उसका स्वभाव खुल जाता है। वह पट्ठा आदमी तो उसे बड़ा भयंकर लगा था। उसे उसका यहाँ आना एक आँख नहीं सुहाया, इसमें भी भला कोई सन्देह करने की बात है?

कैलसिया उसके मन का सन्देह ताड़कर बोली-बाबू, हमारी जिनगी में बस दो ही आदमी मिले, एक मियाँ और दूसरा ये। मियाँ के बाद हमें कभी ऐसा आदमी मिलेगा, इसकी हमें उम्मीद नहीं थी। आपने उस दफे बियाह के बारे में हमसे कहा था न, हम कैसे किसी के साथ भी बियाह कर लेते? मियाँ के मन में का था, उनके आख़िरी दम तक हमें मालूम नहीं हुआ, लेकिन हम तो अपने मन से उनके हो चुके थे। उनके सिवा कोई हमारी आँखों को भाता ही नहीं था। उन्होंने जिस हालत में हमें धूल से उठाकर अपने ताज पर रख लिया था, उस हालत में का कोई किसी लड़की को उठाकर अपने सिर-आँखों पर रख सकता है? हम आज भी उस दिन को याद करते हैं, तो लगता है कि

हम आसमान पर उड़ रहे हैं। उन्होंने हमें जो इज़्ज़त, हिम्मत और ताकत दी, उसमें हमारी बेइज़्ज़ती ही नहीं धुल गयी, बल्कि हम अपने को इतने इज़्ज़तदार समझने लगे, जैसी गाँव में और कोई लडक़ी न हो, हम मियाँ की इज्जत बन गये थे, बाबू! मियाँ की इज़्ज़त का मतलब सायत आप नहीं समझते थे, तभी न आपने बियाह करने की बात हमसे कही थी!

-तेरे बियाह की बात तो अब्बा ही लिख गये थे,-मन्ने से बोले बिना नहीं रहा गया, गोकि वह बोलना नहीं चाहता था, क्योंकि कैलसिया की ये बातें इतनी मार्मिक थीं कि वह उसे बीच में रोकना नहीं चाहता था।

-लिख न जाते, तो का करते, बाबू?-तिनककर कैलसिया बोली-वो जिन्दा रहते तो हम देखते, वो ये बात कैसे उठाते हैं! ...बाबू!-अचानक गद्‌गद्‌ होकर कैलसिया बोली-उस बखत जब भी हम आपको देखते थे...आज अपने मन का चोर आपके सामने निकालने की हिम्मत कर रहे हैं, आपको बुरा लगे तो माफी दीजिएगा...जब भी हम आपको देखते थे, तो एक ही बात मन में उठती थी कि आप ही की तरह हमें एक बेटा मिल जाता! ...चमार के घर में पैदा होकर भी हम ऐसा सोचते थे, बाबू! और मगर मियाँ जिन्दा रहते...-कैलसिया की आँखों से टप-टप आँसू चूने लगे। उसने आँचल से अपना मुँह ढँक लिया और सिसक-सिसककर ऐसे रोने लगी, जैसे उसका कलेजा कटा जा रहा हो!

मन्ने का तो दिल धडक़ने लगा। इस लडक़ी को वह क्या जानता है, क्या समझता है? दुनियादारी ज़िन्दगी को कामयाब बना लेने की बातें, परिस्थितियों से समझौता कर आगे बढऩे के हौसले, भविष्य की आशा से चालित संघर्ष और बातें हैं और यह कैलसिया की भावना और चीज़, और चीज़ है! यह नीच, गँवार लडक़ी...इसके हृदय की ऊँचाई को वह नहीं छू सकता, चाहे वह जीवन में जो भी हो जाय।

-मियाँ चले गये! ...हमने सोचा, वो हमारे लिए एक बेटा तो छोड़ गये हैं। ...लेकिन नहीं, हमारा सोचना उसी साँझ को गलत साबित हो गया। ...मियाँ हमारे लिए कुछ भी नहीं छोड़ गये थे। ...और जब ये बात हमारे मन में उतरी, तो हमने सोचा, हमारी जिनगी अकारथ हो गयी, अब जिन्दा रहने का कोई मतलब नहीं। हमने पिछली बार, जब आपसे भेंट हुई थी, पूरी बात नहीं बतायी थी, अब बताते हैं। ...हम उसी रात को डूब मरने के लिए नादी की ओर चल पड़े। लेकिन अचानक हमें ऐसा लगा कि हमारे ऐसा करने से तो मियाँ की इज़्ज़त को ही बट्‌टा लग जायगा। कल हमारी लास पायी जायगी और गाँव में सोर उठेगा कि...सो हम लौट आये। उस बखत हमारे दिल का जो

हाल था, हम बयान नहीं कर सकते। फिर भी एक उम्मीद थी, सायत आप याद करें। लेकिन आप काहे को याद करने लगे! ...उन चमारों के बीच मियाँ की इज़्ज़त नहीं रह सकती थी। हम यहाँ भाग आये। यहाँ के किस्से आपसे कहने लायक नहीं। ...और एक दिन चटकल से हम बासे को लौट रहे थे। उस दिन कुछ ऐसा संजोग था कि हमारी साथिनें एक-न-एक काम से रास्ते में ही हमसे अलग हो गयीं। साँझ अभी झुकी नहीं थी। डर की कोई बात भी नहीं थी। यों भी हम डरनेवाले कहाँ के! अकेले चले जा रहे थे कि इसी बासे के पास हमें दो आदमियों ने घेर लिया। यहाँ से हमारा बासा अभी आध पाव जमीन दूर था। सडक़ सुनसान थी। फिर भी हम घबराये नहीं। हमने उन्हें घूरकर देखा। उनमें एक चटकल का दरबान था। उसकी ओर बढक़र हमने कहा, रास्ता छोड़ो, हमें जाने दो! इस पर दूसरे ने लपककर हमारी दाहिनी कलाई पकड़ ली और बोला, सीधी तरह चलकर उस गाड़ी में बैठ जाओ! हमने जोर लगाकर कलाई छुड़ानी चाही, तो उसने करौली निकाल ली। हमारी कलाई छुटनी थी कि दरबान ने पीछे से हमारी फफेली दबा दी और वो आदमी हमारी दोनों टाँगें पकडक़र हमें उठाने लगा। हम पूरी ताकत लगाकर उछले, तो उसकी करौली कर्र-से हमारा बायाँ बाजू चीरती हुई चली गयी और हमारे मुँह से एक चीख निकल गयी। वो दोनों सायत हमारी बाँह से खून बहता हुआ देखकर और हमारी चीख सुनकर एक पल को थथम गये। लेकिन हम भागे तो वो फिर सम्हलकर हमारे पीछे दौड़े। उसी समय इस बासे का महतो दौड़ता हुआ वहाँ पहुँचा। हम चिल्लाकर बोले, बचाओ! ये गुण्डे...महतो को देखना था कि वो भाग खड़े हुए। महतो ने उनका पीछा किया। हम वहीं खड़े देखते रहे। महतो लौटकर हाँफता हुआ बोला, गाड़ी में चढक़र भाग गये साले! ...तू कहाँ रहती है? ...अरे, तेरी बाँह जखमी हो गयी है का? खून बह रहा है! हमने कहा, हम चले जाएँगे। और बाजू हथेली से दबाये हम चल पड़े। महतो थोड़ी दूर तक बड़बड़ाता हुआ हमारे पीछे-पीछे आया और फिर लौट गया।

अपने पूरी बाँह के सलूके की कलाई के बटन खोलकर, आस्तीन ऊपर चढ़ाकर कैलसिया ने चीरे का निशान दिखाते हुए कहा-ये लम्बा और एक इन्च गहरा जखम हुआ था। एक महीना भरने में लगा था। इस बीच महतो पता लगाकर एक बार हमारे बासे पर हमको देखने आया था। उसके बारे में हमने पड़ोसियों से पूछा था, तो मालूम हुआ था कि वो बड़ा ही बहादुर और अच्छा आदमी है। उसकी औरत को मरे पाँच साल हो गये। कोई लडक़ा-वडक़ा नहीं, अकेला है। ...अब चटकल में फिर जाने का सवाल हमारे सामने नहीं था। हम अब गाँव लौट जाना चाहते थे। लेकिन एक बात रह-रहकर हमारे मन में उठती थी कि जिस महतो ने हमारी जान बचायी है, उससे मिलने पर सायत कोई और राह निकल आये। ...और एक दिन दोपहर को हम इस बासे पर आये।

देखकर महतो बोला, तू काहे यहाँ अकेले रहती है? तेरे और कोई नहीं है का? और हमारे मुँह से जाने कैसे निकल गया, तू काहे अकेले रहता है? सुनकर महतो ने मुस्कराते हुए आँखें झुका लीं। बोला हम पर तरस आता है तो दुकेला कर न दे हमें! और हम पर जैसे एक नसा चढऩे लगा। कहा, हम चमार की लडक़ी और तू...उसने आँखें उठाकर, हो-हो हँसकर कहा, तू चाहे तो हम भी चमार बनने को तैयार हैं! महतो भी जैसे नसे में ही बोल रहा था। हमने कहा, तो अच्छी तरह समझ बूझ ले, नाहीं पीछे...वह बोला, मरद की जबान एक होती है! कह तो हम अभी तेरा हाथ पकड़ने को तैयार हैं। उठें? और सच ही हम सहन से उठकर इस कमरे में आ गये। ...रात को उसने दस-बीस आदमियों को भोज दिया, रसिया मजीद की कौआली जमी और उसने हमारी माँग में सेन्दुर भर दिया...उस दिन की बात सोचते हैं तो बड़ा वैसा लगता है। कैसे का हो गया, कुछ समझ में नहीं आता, लेकिन इतना जानते हैं कि जो हुआ, बहुत अच्छा हुआ, एक घाट तो लग गये। अब तो यही एक साध है कि एक...

-काहे को बुला रही थी?-तभी दरवाज़े से महतो की कड़ी आवाज़ आयी।

-अरे, अन्दर आ, वहीं से का गला फाड़ रहा है?-मुस्कराकर कैलसिया बोली।

आकर वह ठूँठ की तरह खड़ा हो गया।

कैलसिया ने उसके खिंचे हुए मुँह की ओर देखकर कहा-तो बाबू सायत ठीक ही कहते हैं। का जी, का सच ही इनके आने से तुम नाराज हो?

मुँह बाकर वह बैल की तरह बोला-हाँ!

-भला काहे?-कैलसिया की मुस्की छुटने-छुटने को हो आयी।

मन्ने उसकी ओर ग़ौर से देखने लगा।

आँखें चढ़ाकर वह बोला-पहली दफा तेरे बुलाने जाने पर न आकर इन्होंने तुझे इतना तंग काहे किया? जिमिदार होंगे ये तेरे बाप-दादा और तेरे गाँव के, यहाँ ये अकडख़ाँ काहे पर बने हुए थे? तेरी मोहब्बत की जो कदर नहीं करता, उस पर हम नाराज न हों, तो का हों? ...

-बस-बस!-कहती हुई कैलसिया ठठाकर हँस पड़ी।

मन्ने के शरीर की बोटी-बोटी थिरक उठी। अद्भुत! कैलसिया सच ही कहती थी, यह तो अद्भुत मनुष्य हैं? धन्य है यह! मन्ने की समझ में न आ रहा था कि इस प्रकृति

मानव से वह क्या कहे? काँपते हुए स्वर में बोला-आप ठीक कहते हैं, मैं इसकी मोहब्बत के लायक़ नहीं। मैं निहायत ही बेहूदा इन्सान हूँ! ...

कैलसिया ने मन्ने के मुँह पर हाथ रख दिया-ऐसा मत कहिए, बाबू!

और अब महतो के मुस्कराने की बारी थी। बोला-चल, चल इन्हें भूख लगी होगी, जल्दी रोटी सेंक!-और माथे पर चट से एक मच्छर मारकर कहा-कल इनके लिए एक मच्छरदानी लानी होगी; आज तो अब देर हो गयी।

हाथ धुलाकर, फूल की थाली में कैलसिया दूध-रोटी लेकर आयी, तो बोली-अफरा-तफरी में तरकारी मँगाना भी भूल गये। आज यही खा लीजिए।

मन्ने इस समय जैसे अपने को, अपने रोग को भूल गया था। वह उन्हीं के बारे में सोच रहा था और रह-रहकर एक अदमनीय उल्लास से भर-भर उठता था। एक भूला-बिसरा शेर उसके दिमाग़ में गुनगुना उठता था। बड़ी कोशिश से वह शेर एक-एक टुकड़ा करके उसकी ज़बान पर आया और हर्ष-विह्वल होकर वह मन-ही-मन उसे पढ़ने लगा :

जिऊँगा हाँ जिऊँगा ऐ निगाहे-आशनाए यार

सदा सुहानी ज़िन्दगी है और जहाँ सदा बहार

ऐसी मीटी रोटी उसने कब खायी थी! दूध में यह स्वाद भी होता है, उसने कब जाना था!

लेटा, तो सिरहाने बैठकर कैलसिया उसके सिर पर तेल लगाने लगी और पैताने बैठ महतो ने उसके पाँव पर हाथ रखा, तो मन्ने उठकर बैठ गया-यह नहीं हो सकता! तुम लोग मुझे दोज़ख़ में मत डालो!

कैलसिया की आँखें डबडबा आयीं। बुझे गले से बोली-ऐसा मत कहिए, बाबू! भगवान जाने हमारी गोद कभी भरेगा या नहीं। माँ-बाप का बेटे की सेवा नहीं करते? आप हो नहीं सकते, तो हम आपको ऐसा समझें, का यह भी नहीं सह सकते!

दवा से कम और सेवा-शुश्रूषा, ख़ालिस दूध और मोटे-झोटे खाने से अधिक, मन्ने की तबियत कुछ सम्भल गयी। वह रात में दो-चार घण्टे की नींद भी लेने लगा और उसका पेट भी कुछ ठीक रहने लगा। उसकी पढ़ाई फिर चल निकली। उसे अब खर्च की कोई चिन्ता न रह गयी, किसी बात की चिन्ता करने की उसे आवश्यकता ही न थी। कैलसिया और महतो अपना सर्वस्व उस पर न्यौछावर करने को तैयार रहते थे। फिर

भी जैसे एक व्याकुलता उसकी नस-नस में सदा व्याप्त रहती। उसे लगता कि वह कैलसिया और महतो के प्रेम के घेरे में इस तरह बन्द हो गया है, जैसे कोई क़ैदी जेल में। यह प्रेम इतना आदिम, इतना अनगढ़, इतना दीन किन्तु शक्तिशाली, ऐसा अदम्य, ऐसा सर्वत्यागी तथा इतना प्रगाढ़ और निस्सीम था कि उसे झेलना मन्ने के लिए एक भयानक यन्त्रणा के समान था। उसकी तरह सुसंस्कृत युवक के लिए वह कुछ उसी तरह था, जैसे सदा शूगर कैण्डी उपयोग करने वाले किसी आदमी के सामने कोई कुरुई में भेली की पीडिया ला रखे। कठिनाई यह थी कि वह उनकी उस भावना की प्रशंसा किये बिना तो न रह सकता था, किन्तु उस भावना का प्रतिदान देने में वह अपने को नितान्त असमर्थ पाता था। लाख कोशिश करने पर भी वह उनके साथ कोई सम्बन्ध, कोई लगाव अनुभव नहीं कर पाता था, जैसे वे उसके लिए सर्वथा अपरिचित हों, और कभी भी, किसी हालत में भी परिचित न हो सकते हों। उसे मालूम नहीं कि उसके माँ-बाप उसकी इस आयु में जीवित होते और उसके साथ इसी तरह का व्यवहार करते, तो उसकी क्या प्रतिक्रिया होती, किन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि उनका वह व्यवहार अस्वाभाविक अवश्य होता। उसे लगता था कि इस वातावरण में वह अधिक दिन रह गया, तो वह ऐसा दीन-हीन हो जायगा, जैसे कोई अनाथ शिशु। उसका अस्तित्व इस प्रेम के जंगल में इस प्रकार खो जायगा, कि ढूँढ़े से भी उसे कोई राह न मिलेगी। कभी-कभी उनके प्रेम के अपव्यय और अत्याचार से वशीभूत होकर वह सोचता, काश, वह एक शिशु होता, तब और कुछ नहीं, तो चीख़कर रो तो देता! कभी-कभी उसके मन में आता कि वह सीधे कह दे, तुम लोग किसी बच्चे को गोद क्यों नहीं ले लेते, बूढ़े सुग्गे को पालने से क्या फ़ायदा? लेकिन नहीं, वह कुछ भी न कहता, कुछ भी न करता, यह अत्याचार सहे जाता और मन-ही-मन सुलगता रहता कि कब उसे कारागार से मुक्ति मिलेगी?

इस कारागार से मुक्ति पाना क्या सच ही इतना कठिन था? किसी भी दिन वह उस जगह को छोड़ जाना चाहता, तो क्या कैलसिया उसे रोक लेती? या किसी से मोह-छोह के बन्धन में मन्ने जकड़ा जा सकता था? मन्ने के मन में ये सवाल क्यों दबे हुए थे? यह क्यों नहीं उन्हें उठने देता और उनका जवाब देता? कदाचित् इसीलिए कि अभी इसके लिए अवसर नहीं था। अवसर आएगा तो वह इन सवालों को स्वयं उठाएगा और स्वयं जवाब देगा और अपने को नीच, स्वार्थी, अवसरवादी घोषित कर लेगा और इस तरह प्रायश्चित करके अपने दुष्कर्मों से छुट्टी पा लेगा। अभी नहीं, अभी नहीं, अभी उसे इस वर्ष की पढ़ाई पूरी करनी है। अभी एक अन्तव्यथा का आवरण चढ़ा रहे, अभी रग-रग में व्याकुलता का ढोंग चलता रहे, अभी किसी-न-किसी कारण का मन में आविष्कार होता रहे, अभी किसी विवशता के नाम का जाप चलता रहे! इससे बड़ा

सन्तोष मिलता है, इससे भरम बना रहता है, इससे हीन भाव से सरलता से सुरक्षा प्राप्त हो जाती है, इससे अपनी हार और कुण्ठा से आँख मूँद लेने में सहायता मिलती है।

पर्चे बहुत अच्छे नहीं हुए, लेकिन उसे मौलाना की उदारता में विश्वास था। अन्धों में काना राजा होता है, यह भी उसे मालूम था। उसे प्रथम श्रेणी मिल जायगी और वह प्रथम भी रहेगा, इसमें कोई सन्देह नहीं रहा।

उसने कैलसिया से कहा-आज मेरी छुट्टी हो गयी, गाँव जाऊँगा।

कैलसिया की आँखें यह सुनकर सहसा ही सूनी हो गयीं। सूखे गले से बोली-इधर रात-दिन आपने बड़ी कड़ी पढ़ाई की है, दो-चार दिन आराम कर लीजिए, फिर जाइएगा।

-नहीं, मुझे जाने दो!

-इतनी जल्दी का पड़ी है?-और भी सूखकर कैलसिया बोली-जाने का कुछ सामान भी तो करना पड़ेगा?

-नहीं, कुछ नहीं करना है। मैं शाम की गाड़ी से चला जाऊँगा!

-नहीं, यह कैसे हो सकता है? ऐसे हम कैसे आपको जाने देंगे?

-मैं ऐसे ही जाऊँगा। अब रुकना मुश्किल है। साल-भर गाँव-घर छोड़े हो गया।

-तो दो-चार दिन से का बनने-बिगड़ने वाला है? हमारी एक बात मानिए।

-नहीं, अब रुकना बेकार है। मैं चला जाऊँगा।-कहकर मन्ने अपनी किताबें समेटने में लगा।

महतो ने आकर कैलसिया को उस तरह उदास खड़े देखा, तो पूछा-का बात है?

-बाबू आज साँझ को ही जा रहे हैं।

-काहे?

मन्ने बोला-इम्तिहान ख़त्म हो गया...

-हम कहते थे कि दो-चार दिन रुककर जाएँ,-कैलसिया बोली।

-तो ये का कहते हैं?-महतो ने पूछा।

-नहीं, मैं शाम की गाड़ी से जाऊँगा!-मन्ने ही बोला।

सुनकर महतो ठूँठ की तरह खड़ा हो गया, ठीक वैसे ही जैसे मन्ने के यहाँ आने के दिन वह इनके सामने आकर खड़ा हुआ था। कैलसिया ने उसे उस रूप में देखा, तो आज उसके रोंगटे खड़े हो गये। वह उसकी बाँह पकडक़र कमरे से बाहर खींच ले गयी। मन्ने यह देखकर भी अनदेखा कर गया। मन्ने अब एक दिन भी रुकने को तैयार न था।

मन्ने के जाने के पहले कैलसिया कई छोटी-बड़ी गठरियाँ लेकर उसके पास आयी। उसकी आँखों से झर-झर आँसू गिर रहे थे। बड़ी मुश्किल से वह बोल पा रही थी-ये माँ के लिए हैं...ये आपके लिए...इसमें पूरी मिठाई है, रास्ते में आपके खाने के लिए...पहुँच की चिट्ठी दीजिएगा...अगले साल आएँगे न?

मन्ने कुछ बोलना न चाहता था, उसने सिर हिला दिया।

-हमारा घर सूना हो जायगा! ...लगता है, कोई परदेश जा रहा है! ...जल्दी आइएगा! ...सीधे यहीं आइएगा! ...पिछली बार की तरह कहीं और जाकर मत ठहर जाइएगा! ...

गूँगे की तरह मन्ने सिर हिलाता रहा।

-एक बात और आपसे कहनी थी,-कैलसिया ने आँचल से आँसू पोंछकर कहा-मियाँ का मकबरा कितने में बन जायगा? बीस बीसी और बीस बीसी रुपया हमने जमा कर लिया है। इतने में बन जायगा?

मन्ने चौंककर उसका मुँह ताकने लगा। बोला-हम ख़ुद बनवाएँगे।

-तो इसको भी उसी में लगा दीजिएगा, उनके नाम काढ़ा हुआ रुपया है।

-नहीं, तुम्हारा रुपया...

-हमारा का आपका नहीं है, बाबू?-कैलसिया की आँखों से फिर आँसू का सोता फूट निकला-आप इसे लेते जाइए, बाबू!

मन्ने का बुरा हाल था। यह औरत क्या सच ही उसे कहीं का नहीं रखेगी? इतने जूते वह कैसे बरदाश्त किये जा रहा है? क्या उसकी चमड़ी सचमुच इतनी मोटी हो गयी है?

बोला-नहीं, अभी अपने ही पास रख! अगले साल आएँगे न!

-कब काम लगाएँगे?

-एक साल की पढ़ाई और रह गयी है। उसके बाद।

-टीसन तक हम चलेंगे न, बाबू?

-नहीं।

-काहे?

-कोई ज़रूरत नहीं,-और मन्ने बाहर चला गया।

सडक़ से एक रिक्शेवाले को बुलाकर मन्ने लौटा, तो उसने देखा, बाहर थान पर एक भैंस के पास महतो ठूँठ की तरह खड़ा था। कमरे के अन्दर घुसा, तो देखा, कैलसिया उसके बँधे बिस्तर पर सिर डाले बैठी सिसक रही थी।

मन्ने क्या सचमुच ही पत्थर हो गया है? क्या वह एक भी प्यार का, सान्त्वना का शब्द नहीं बोल सकता? अरे कमबख़्त! यहाँ से तू जा तो रहा ही है, तो इसका क्या यह मतलब है कि तू इन्हें पाँवों से रौंदकर ही जा सकता है?

बोला-कैलसिया! अगर तू इस तरह करेगी तो मैं फिर कभी भी तेरे यहाँ न आऊँगा!-फिर रिक्शेवाले की ओर देखकर कहा-आ भाई रिक्शेवाले, ये सामान हैं, ले जाकर रख तो।

कैलसिया ने खड़े होकर आँसू सुखा लिये और लपककर सूटकेस उठाने लगी, तो मन्ने बोला-नहीं, तुम मत उठाओ। रिक्शेवाले को ले जाने दो।

लेकिन कैलसिया माननेवाली न थी। वह उठाकर बाहर चल दी।

रिक्शेवाले के पीछे-पीछे मन्ने चला, तो उसके पीछे से आवाज़ आयी-सलाम!-जैसे किसी ने गोली दागी हो।

मन्ने ने पीछे मुडक़र नहीं देखा। वह जानता था, यह महतो है। एक सलामी उसने उसके आने पर दागी थी और यह दूसरी उसकी रुख़सती पर थी। पहली गोली शायद उसे कहीं लगी थी, लेकिन यह दूसरी कहाँ लगी, मन्ने फिर कभी बाद में सोचेगा।

रिक्शे पर वह बैठ गया, तो कैलसिया आँखों में आँसू थामे, मन्ने की टोपी ठीक से बैठाती हुई बोली-पहुँचते ही चिठ्ठी दीजिएगा!

रिक्शा चल पड़ा, तो बोली-सलाम, बाबू!

मन्ने ने कोई जवाब न दिया, जैसे उसने सुना ही न हो। वह इस तरह सम्हलकर रिक्शे पर आसन जमाने में व्यस्त था, जैसे उसने वैसा न किया, तो गिर ही पड़ेगा।

गाड़ी ने हावड़ा छोड़ दिया, तो मन्ने के लिए अनायास ही कलकत्ता और कलकत्ता की बातें पीछे छूट गयीं और आगे की बातें उसके सामने ऐसे आ गयीं, जैसे फ़िल्म के एक दृश्य के बाद दूसरा। ...इतने दिनों बाद उसे घर की सुधि आयी...बहनें याद आयीं...बाबू साहब याद आये...महशर याद आयी...मुन्नी याद आया। इस बीच उसने किसी की भी सुधि न ली थी, किसी को एक पत्र न लिखा था, किसी को अपने पते की सूचना न दी थी। और अब उनके बारे में सब-कुछ जान लेने के लिए वह इस तरह बेचैन और उतावला हो उठा कि ज़रा देर भी सहृय न हो। उन बेचारों पर उसे लेकर इस बीच क्या गुज़री होगी, अब रह-रहकर उसे इसका मलाल होने लगा। उसने उन्हें पत्र क्यों न लिखे, उन्हें अपने पते की सूचना क्यों न दी, उन्हें इस तरह क्यों बिसरा बैठा, इन प्रश्नों के उत्तर वह क्या देगा? यही न कि वह अपनी पढ़ाई में किसी प्रकार का भी कोई विघ्न न चाहता था? लेकिन क्या इसका यह मतलब नहीं होता कि वह सबको मारकर अकेला ज़िन्दा रहना चाहता था? क्या किसी का स्वार्थ, किसी की महत्वाकांक्षा इतनी बड़ी, ऐसी सर्वग्रासी होनी चाहिए? नहीं-नहीं, मन्ने ऐसा स्वार्थी नहीं, ऐसा महत्वाकांक्षी नहीं, वह तो सिर्फ़ ज़िन्दगी को एक राह पर लगाना चाहता है, जो भी वह करता है, केवल एक इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए और वह भी यह सोचकर कि थोड़े दिनों की बात है, दिल कड़ाकर, आँख मूँदकर ये दिन काट ले, फिर तो वह एक-एक कर अपने सब अपराधों का प्रायश्चित कर लेगा, अपने सब अधूरे, भूले कत्र्तव्यों को पूरा कर देगा, सबका पावना गिन-गिनकर चुका देगा, सबकी शिकायतें दूर कर देगा। इस समय उसकी मजबूरियों को, परेशानियों को लोगों को समझना चाहिए, वह क्या सिर्फ़ अपने ही लिए यह सब कर रहा है? उसका क्या है, उसकी अपनी ज़रूरतें क्या हैं? ...

घर पहुँचा, तो दो समाचार उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे, एक यह कि उसके बच्ची हुई है और दूसरा यह कि उसकी बड़ी बहन बेवा होकर अपने तीन छोटे-छोटे बच्चों के साथ घर आ गयी है। मन्ने की समझ में न आ रहा था कि वह ख़ुशी मनाये या ग़म? यों भी अर्सा हुआ, मन्ने के लिए कोई ख़ुशी ख़ुशी न रह गयी थी, न ग़म ग़म। लेकिन जब उसे मालूम हुआ कि बेवा बहन अपने बच्चों के साथ यहीं रहेगी, ससुराल में उसका सब-कुछ उसके पट्टीदारों ने हड़प लिया है और वहाँ उसके लिए कोई सहारा नहीं रह गया है, तो मन्ने की जैसे कमर ही टूट गयी। बहन ने रो-रोकर उसे सब सुनाया। पट्टीदारों में किसी खेत के पीछे लड़ाई हुई, लाठी चली, जिसमें उसके मियाँ जान से

मारे गये। पट्टीदारों ने उसे घर से निकल जाने के लिए मजबूर किया। पर्दानशीं औरत, क्या करती? उसने भाई को खत लिखा, लेकिन पहुँचे बाबू साहब और वह उनके साथ अपने बच्चों को लिये आ गयी। अब उसके लिए दो ही रास्ते रह गये हैं, या तो भाई उसके पट्टीदारों से मुक़द्दमा लडक़र उसे उसका हिस्सा दिला दे, या चुप होकर, सब्र करके वह यहीं पड़ी रहे। उसके लिए दोनों सूरतों में कोई फ़र्क़ नहीं, चाहे यहाँ रहे, चाहे वहाँ, उसकी ज़िन्दगी तो बर्बाद हो ही गयी।

निरभ्र आकाश से यह वज्रपात हुआ था। एक बनता नहीं और दो बिगड़ जाते हैं। दूर बहन की ससुराल जाकर मुक़द्दमा लडऩा और उसके हिस्से पर उसका कब्ज़ा दिलाना मन्ने के लिए असम्भव था। इसके लिए पैसे और समय की ज़रूरत थी और मन्ने के पास इन दोनों का अभाव था। स्पष्ट था कि इन चार प्राणियों का भार अब उसे ही आजीवन वहन करना पड़ेगा। महँगी में आटा गीला इसी को कहते हैं।

बाबू साहब मिले, तो उसने सोचा, वे ज़रूर खफ़ा होंगे, शिकायत करेंगे कि क्या वे ऐसे ग़ैर हो गये कि उसने एक ख़त तक न दिया? लेकिन सलाम करने के बाद वे सिर झुकाकर बैठे, तो लगा कि जैसे उनका सिर गर्दन से टूटकर लटक गया है!

मन्ने क्या कहता है? वह अपराधी की तरह ख़ामोश बैठा रहा।

बड़ी देर के बाद बाबू साहब ने सिर उठाया। बोले-यह आपकी क्या हालत हो गयी है? तबीयत ख़राब थी क्या?

-हाँ,-मन्ने ने कहा-मलेरिया हुआ था, बाद में पेट ख़राब रहने लगा और नींद उड़ गयी।

कलकत्ते का पानी बहुत ख़राब है। जाने आपको किसने बुद्घि दी कि आप वहाँ गये। देह माटी हो गयी! अब तो तबीयत ठीक रहती है?

-नहीं, अब भी कोई ख़ास ठीक नहीं है। लेकिन उम्मीद है कि यहाँ ठीक हो जायगी। आप अपनी कहिए?

-अपनी क्या कहें? ...यहाँ का तो आपने सुना ही होगा। एक लडक़ी अभी घर में पड़ी ही है, दूसरी भंग होकर आ गयी। क्या सोचते हैं आप उसके बारे में?

-सोचना क्या है, यह-सब हमारी क़िस्मत का खेल है। जो सिर पर आ पड़ा है, उसे तो झेलना ही पड़ेगा और चारा ही क्या है?

-बड़े मर्द आदमी थे। वहाँ जो भी मुझे मिला, उनका गुणगान करता था। सब कहते थे, उन्हें धोखे से मारा गया, वर्ना वो अकेले चार-चार पट्टीदारों पर भारी थे। क्या उनके बच्चों के लिए कुछ भी नहीं किया जा सकता?

-क्या किया जा सकता है? आप तो मेरी हालत से वाक़िफ़ हैं। मुक़द्दमा लडऩा क्या मेरे बस का है?

-वही सोचकर तो मैं भी ख़ामोश बैठा रहा। जुब्ली मियाँ कहते थे...

-जुब्ली मियाँ को छोड़िए, दूसरे के घर में आग लगे तो हाथ फैलाकर तापने वाले आदमी हैं वो!

फिर थोड़ी देर ख़ामोश रहने के बाद बाबू साहब बोले-आपकी ससुराल मैंने बधावा भेज दिया था। अब बच्ची को देखने को मन छटपटा रहा है। जाकर ले आइए!

बाबू साहब के इस अचानक भाव-परिवर्तन से मन्ने चौंक-सा उठा। कैसे आदमी हैं ये? न शिकवा, न शिकायत, उसी के स्वास्थ्य के लिए चिन्ता, उसी के दुख की बात और अब जैसे उसी का दुख हल्का करने के लिए यह सुख-सम्वाद! उसे तो डर था कि वे उसे डाँटेंगे, उस पर नाराज़ होंगे और यहाँ...जैसे उसके किसी भी व्यवहार का उन पर कोई असर ही नहीं, जैसे उनका अपना व्यवहार एक अलग चीज़ हो, जो अपनी लीक से कभी उतरनेवाला नहीं।

फिर भी बोला-देखेंगे।

-इसमें देखना क्या है? क्या अपका मन बच्ची को गोद में लेने को नहीं होता?

बाबू साहब का ख़याल था कि उनकी यह बात सुनकर मन्ने हुलसकर शरमा जायगा, लेकिन उसके चेहरे का बादल तो जैसे और जम गया। वह बोला-मन की मैं कहाँ सुन पाता हूँ, बाबू साहब? मन की कभी मैं कर सकूँ, ऐसा सौभाग्य मुझे कहाँ मिला? मुझे तो हमेशा यह भय लगा रहता है कि मन को मैंने कान दिया नहीं कि मेरी नाव डूबी। और अब तो ऐसा लगता है कि बावजूद मेरे इतना चौकस रहने, मन मारने और दिल को पत्थर बनाने के मेरी ज़िन्दगी...

-ऐसी बात मुँह से न निकालिए!-व्याकुल होकर बाबू साहब बोले-दुख-सुख तो ज़िन्दगी के साथ लगे ही रहते हैं, भला इस तरह कोई अपना दिल तोड़ता है!

-मैं नहीं तोड़ता, बाबू साहब! लेकिन मुझे लगता है कि यह आप-ही-आप टूटा जा रहा है।-और मन्ने उठ खड़ा हुआ, क्योंकि उसे लगा कि इस तरह उसने और थोड़ी देर बातें कीं, तो वह रो देगा।

रात-भर वह दुश्चिन्ताओं के बोझ के नीचे दबा रहा और उसे एक पल को भी नींद न आयी। नींद उसे यों भी तीन-चार घण्टों की ही आती थी, लेकिन वह धीरे-धीरे इसका अभ्यस्त हो गया था, इसकी वजह से उसे कोई ज़्यादा तकलीफ़ न होती थी, गोकि वह बराबर एक थकान, अंग-अंग में एक धीमी-धीमी टूटन और दिमाग़ में हल्के से चिड़-चिड़ेपन का अनुभव करता रहता था। पेट ख़राब होता, तो ये बातें और भी बढ़ जातीं और कभी-कभी तो दिल-दिमाग़ की ऐसी कैफ़ियत हो जाती कि जी में आता कि बस, चुपचाप निर्जीव की तरह पड़े रहो, मन जैसे डूबने-सा लगता, दिमाग़ जैसे सुन्न-सा हो जाता, अंग-अंग जैसे शिथिल-सा हो जाता। लेकिन यह स्थिति देर तक न रहती। धीरे-धीरे वह सम्हल जाता। ऐसे अवसर के लिए डाक्टर ने उसे एक पेटेण्ट दवा बता दी थी, जो वह सदा अपने पास रखता था।

सुबह बिस्तर छोड़ने का उसका मन न हो रहा था। एक ग़नूदगी की हालत में वह पड़ा था और उसका दिमाग़ जैसे शक्तिहीन होकर बेकाम हो गया था। वह योंही पड़ा रहना चाहता था कि दरवाज़े की कुण्डी बज उठी। उसने आँखें खोलकर दरवाज़े की ओर देखा, लेकिन उठकर खोलने को मन न हुआ। फिर एक पतली, कमज़ोर और मीठी आवाज़ आयी-मामू।

यह शायद उसका बड़ा भांजा है। यह कमबख़्त कैसे यहाँ आ गया? मन्ने कस-मसाकर उठा और दरवाज़ा खोलकर देखा, तो बिलरा की गोद में चढ़ा उसका बड़ा भांजा कह रहा था-मामू जान, चलिए, अम्मा नाश्ते के लिए बुला रही हैं।

मन्ने का जी हुआ कि लौंडे को डाँटकर भगा दे, लेकिन दूसरे ही क्षण उसका भोला, सुन्दर चेहरा देखकर जैसे उसे तरस आ गया और उसने अपने दोनों हाथ बढ़ाकर उसे अपनी गोंद में ले लिया। बोला-आप नाश्ता कर चुके?

-नहीं, अम्मा कहती हैं, पहले आप नाश्ता करेंगे, तब हम। आप जल्दी चलिए। सब लोग आपका इन्तज़ार कर रहे हैं।

उसे गोद में लिये ही मन्ने बिस्तर पर बैठ गया। बोला-अभी तो मैंने मुँह भी नहीं धोया-और उसका सिर सहलाने लगा।

उसका मुँह देखते हुए भांजे ने उसके गाल पर हाथ रखकर कहा-मामू, यह आपके गाल पर काला-काला क्या है?

-यह काला धब्बा है, बेटा,-मन्ने जैसे उसके सवाल में दिलचस्पी लेता हुआ, उसे समझाकर बोला-मेरे जिगर का फ़ेल ठीक नहीं, यह उसी की निशानी है।

बच्चा कुछ न समझकर पलकें झपकाने लगा और अँगुलियों से उस धब्बे को रगड़ने लगा। फिर अचानक जैसे कुछ याद करके बोल पड़ा-मामू, आपके दाढ़ी क्यों नहीं है, अब्बा के तो इत्ती बड़ी दाढ़ी है।

मन्ने के कहीं जैसे कुछ कसक उठा। उसने ग़ौर से बच्चे की ओर एक क्षण को देखा, फिर सहसा ही उसे गोद में लिये उठ खड़ा हुआ। बोला-चलिए, आपको भूख लगी है न!

खण्ड से घर के रास्ते में मन्ने ने जिस-जिसको देखा, सबको अपनी ओर घूरते हुए पाया, सबकी आँखों में एक सम्वेदना और सहानुभूति का भाव था।

घर में जाकर गोद से भांजे को उतारते हुए मन्ने बोला-भाई, तुम लोग इन्हें नाश्ता क्यों नहीं देतीं?

एक नन्हें लाल फ्राक में सूई-तागा फँसाये छोटी बहन आकर बोली-पहले आप नाश्ता कर लीजिए, फिर...

-नहीं, बच्चों को दे दो। अभी तो मैंने मुँह भी नहीं धोया।

-तो मैं मिसवाक लाती हूँ, यहीं धो लीजिए।-कहकर वह लपकी अपने कमरे में गयी और एक मिसवाक लाकर, उसे देती हुई बोली-पानी लाती हूँ।

आँगन के दाबे पर बैठकर मन्ने दातून दाँतों में कुचलने लगा। बहन बधना उसके पास रखकर खड़ी हो गयी। मन्ने ने उसकी ओर देखा तो लगा, जैसे वह कुछ कहना चाहती है। बोला-यह तुम्हारे हाथ में क्या है?

झट से पीछे छुपाती हुई वह बोली-कुछ नहीं!

-कुछ तो है?-योंही मन्ने बोला।

-क्या है, यहाँ तो कोई अच्छा कपड़ा भी नहीं मिलता!-नाक चढ़ाकर वह बोली-आपसे इतना भी न हुआ कि और कुछ नहीं, तो कम-से-कम कुछ अच्छे कपड़े ही कलकत्ते से लेते आएँ।

-आख़िर है क्या वह?-टालने के लिए उसने अपना सवाल ही फिर दुहराया।

-फ्राक है और क्या?

-किसके लिए?

-शम्मू के लिए।

-शम्मू कौन है?

-अब बनिए मत!-आँखें चमकाकर उसने कहा।

मन्ने को कुछ अन्दाज़ा हो गया। फिर भी जैसे कुछ मज़ा लेता हुआ बोला-मुझे नहीं मालूम, तुम्हारी क़सम।

-हाय अल्लाह!-हैरान होकर वह बोली-क्या भाभी जान ने आपको नहीं लिखा कि नूरचश्मी का नाम उन्होंने शमीमा रखा है और उसे पुकारते हैं शम्मू कहकर?

-ओह!-कहकर मन्ने ज़ोर-ज़ोर से दाँत मलने लगा।

-भैया! भाभी जान को लाने कब जा रहे हैं? यहाँ सब छठ्ठी की दावत माँग रहे हैं। हम टालते आ रहे हैं कि भैया आएँगे, तब देखा जायगा।

मन्ने ने खड़े होकर दातून टोटे पर रख दिया और फिर बैठकर कुल्ला करने लगा। वह बोला कुछ नहीं, मन-ही-मन वह डर रहा था कि कहीं यह बात बड़ी बहन तो नहीं सुन रही। यह अल्हड़ लडक़ी, इसके हिस्से तो जैसे सिर्फ़ ख़ुशी पड़ी है। इतनी बड़ी हो गयी, कोई समझ नहीं आयी इसे।

-बोलते क्यों नहीं, भैया?

-चलो, नाश्ता लाओ,-मुँह धोकर उठते हुए मन्ने बोला।

नाश्ते पर वह बैठा, तो उसके तीनों भांजे उसके पास आ गये। उससे कुछ खाया न जा रहा था। एकाध निवाला उसने किसी तरह खाया और फिर अपने भांजों को खिलाने

लगा। उस वक़्त जाने कैसी एक मीठी, तोतली आवाज़ बार-बार आकर उसके कानों से टकरा रही थी-अब्ब! अब्ब!

रसोई से बड़ी बहन ने देखा, तो आकर अपने बच्चों को डाँटती हुई बोली-तुम लोग यहाँ क्यों आ गये? मामू को खाने दो!

-नहीं-नहीं, तुम इन लोगों को मना मत करो। मेरी तबीयत खाने को बिलकुल नहीं।-मन्ने ने उठते हुए बच्चों का एक-एक कर हाथ पकड़ते हुए कहा।

छोटी बोली-आपा, भैया से तुम कहो न! मेरी तो ये बात ही नहीं सुनते!

-हाँ, बाबू,-बड़ी बोली-तुम जल्दी जाकर उन्हें ले आओ। हम-सब बच्ची को देखने को तड़प रहे हैं!

सती मैया का चौरा भाग 6- Satee Maiya Ka Chaura Part 6

1. सती मैया का चौरा भाग 1
2. सती मैया का चौरा भाग 2
3. सती मैया का चौरा भाग 3
4. सती मैया का चौरा भाग 4
5. सती मैया का चौरा भाग 5
6. सती मैया का चौरा भाग 6
7. सती मैया का चौरा भाग 7
8. सती मैया का चौरा भाग 8
9. सती मैया का चौरा भाग 9
10. सती मैया का चौरा भाग 10
11. सती मैया का चौरा भाग 11